मानवी
सृजन-सोपान

मानवी

अक्टूबर-दिसम्बर 2025

त्रैमासिक साहित्यिक ई पत्रिका

कविता सिंह

अहमदाबाद

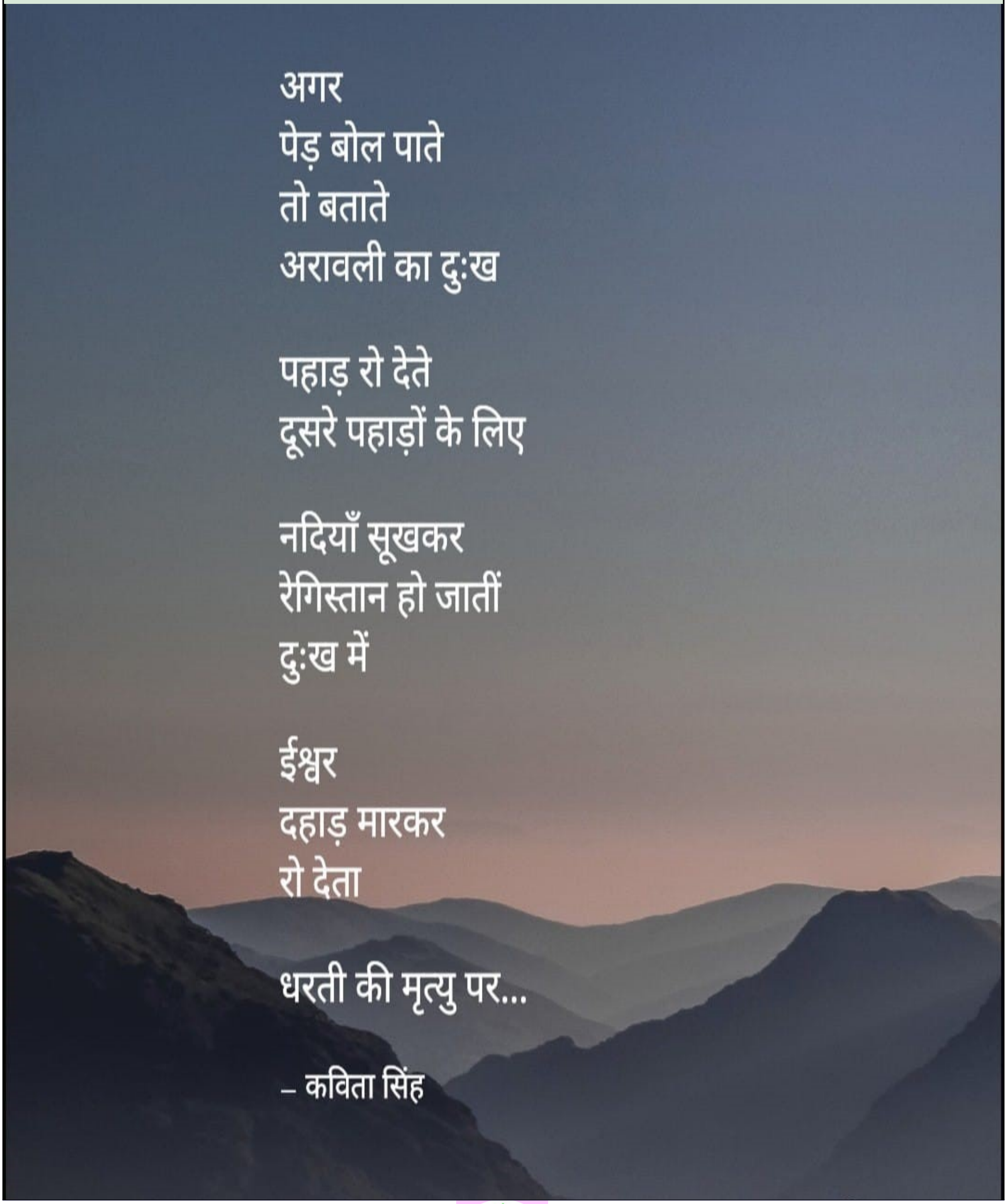

त्रैमासिक ई पत्रिका

वर्ष– 5 ,अंक – 4 (अक्टूबर - दिसंबर 2025)

प्रधान सम्पादक - कविता सिंह

****

सम्पादक—राजेश कुमार सिंह

****

आवरण -चित्र -तेजस सिंह

****

ई मेल : manvipatrika@gmail.com

****

Website : http://www.manvipatrika.co.in/

****

संरक्षक

श्रीमती जानकी किशोरी देवी एवं

श्री राम चन्द्र सिंह

****

पता -कार्यकारी -बी -701 ,स्वाति फ्लोरेंस , निकट सोबो सेंटर ,साउथ बोपल ,अहमदाबाद -380058

स्थायी - 274/x ,शक्ति णगर कालोनी ,आरोग्य मंदिर ,गोरखपुर -273003

मोब -9833775798

मानवी पत्रिका में प्रकाशित लेख /काव्य आदि रचनकारों के अपने विचार है ,जिनसे प्रकाशक/ संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है । सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गोरखपुर रहेगा । रचना की मौलिकता का दायित्व रचनाकार का है पत्रिका से जुड़े सभी पद अवैतनिक है ।

पत्रिका प्रधान संपादक कविता सिंह जी के स्वामित्व में आन-लाइन प्रकाशित होती है। पत्रिका के वेबसाईट से सभी अंकों का पीडीएफ़ डाउनलोड किया जा सकता है ।
पत्रिका निःशुल्क है , पत्रिका का उद्देश्य हिन्दी साहित्य की सेवा है।

पत्रिका आप सभी मित्रों से रचनात्मक सहयोग के अलावा अर्थ-सहयोग का भी निवेदन करती है, यह स्वैच्छिक है आप पेटिएम नं - 9833775798 पर स्वेच्छा से यथासंभव धनराशि सहयोग के रुप में अंतरित कर सकते हैं।

इस अंक में .....

संपादक की कलम से – 5/6

काव्य धरोहर

7- सर्वेश्वरदयाल सक्सेना
7- विनोद कुमार शुक्ल

लेख /आलेख /संस्मरण

8- कृष्ण कुमार यादव- कोई लौटा दे वो चिट्ठियाँ
12- बसन्त राघव- जब बाबा ने मेरे कान उमेंठे - डॉ.बलदेव
15- नलिन खोईवाल - निराशा के घने कुहासे में आशा का उगता दिनकर है , साहित्य
17- आकांक्षा यादव - छठि मईया आई न दुअरिया : सूर्य उपासना का पर्व है छठ
20- शैलेन्द्र चौहान - समृद्ध संस्कृति का प्रतीक - ऐतिहासिक नगर विदिशा
23- दुर्गेश मोहन- साहित्य के आधार स्तम्भ डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव
28- कादंबरी मेहरा - लोहड़ी

हास्य /व्यंग्य

25- डॉ. मुकेश 'असीमित'- चलो बुलावा आया है
27- डॉ० दलजीत कौर- कुत्ते सातों उत्ते (कुत्ते हमसे ऊपर)

कहानी

31- श्यामल बिहारी महतो -संस्कारी पुड़िया
34- राजेन्द्र परदेसी - आधुनिकता की आँधी
37- शराफ़त अली ख़ान- वो लड़की
40- पद्मा अग्रवाल - दक्षिण भारत तुम्हें सलाम
42- बृज गोयल - बदलते मूल्य
44- वाजिद हुसैन सिद्दीक़ी - वह नीली शर्ट वाला आदमी
46- शीला मिश्रा - खुशियों का द्वार

लघुकथा

24- अश्विनी देशपांडे- खोया हुआ आज
26- मोनिका तोमर - सतह के परे
36- रमेश कुमार संतोष – मजदूर
43- चंद्रकला जैन- डोनर
45- डॉ. चंद्रेश कुमार छतलानी - बॉस इज़ ऑलवेज़ राइट
45- अशोक आनन - कल के सपने
49- डॉ. सुरेश पुष्पाकर- टूटते पत्थर
50- भगवती सक्सेना गौड़ - वक्त का पहिया
51- दीपक कुमार - चालीस पार
52- संजय मृदुल - दो बेटे

काव्य /हाइकु /ग़ज़ल

2- कविता सिंह—अराव ली का दुख
16- रामस्वरूप मूंदड़ा- गजल
16- संजय ग्रोवर - गजल
19- वसंत जमशेदपुरी- कुंडलियाँ
33- सुभाष सेमल्टी -'देख अहिंसक को हिंसक बन'
33- रवींद्र कुमार शर्मा- थकी हुई सी जिंदगी
39- प्रेम विज- सिंदूर का कर्ज़
48- विनोद कुमार वर्मा - ताप हरो हे शिवशंकर
49- विनोद कुमार वर्मा - ताप हरो हे शिवशंकर
53- राजकुमार कुम्भज की कविताएँ
54- तारकेश्वरी 'सुधि'- कुंडलियाँ
55- अनिल कुमार मिश्र- मील के पत्थर
55- डॉ.राजीव डोगरा - अजनबी तन्हाई
56- शेफालिका सिन्हा - असली सुख
56- डॉ दिव्या कुमावत- ओ स्त्री
57- केशव शरण- गजल
58- शुचि मिश्रा की कविताएँ
59- प्रवीण पारीक 'अंशु'- गजल
60- प्रेरणा पुरोहित मंत्री- दोहे (विषय-शीत)
60- मंजू मैत्री - सपनों की डोली
61- डॉ.संध्या शुक्ल 'मृदुल'- वो मध्य प्रदेश है मेरा
61- सुरभि डागर- पत्र पेटिका , खूबीयाँ
62- गोपाल सिन्हा- कवि और कविता
62- प्रो.(डॉ.)शरद नारायण खरे- शरद-आगमन
63- डॉ.विनीत मोहन औदिच्य - स्वयं में... (सॉनेट) , भावना (सॉनेट)
63- राजपाल सिंह गुलिया – हाइकु
66- अनिता सिंह (शिक्षिका)- माटी अपना मनमीत
66- सोनिया सैनी - अधूरी तलाश
68- विद्या भट्ट - चुरा लाई हूं

पुस्तक समीक्षा -

64- डॉ. इन्द्र सेंगर- भारतीय परिवेश को खंगालती र चनाएं
67- डॉ. ज़ियाउर रहमान जाफ़री- उजालों के आसपास :ग़ज़ल में नई ज़मीन की तलाश

कुछ मेरी भी....

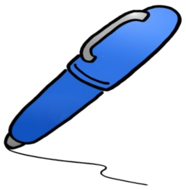

हताशा से एक व्यक्ति बैठ गया था
व्यक्ति को मैं नहीं जानता था
हताशा को जानता था
इसलिए मैं उस व्यक्ति के पास गया
मैंने हाथ बढ़ाया
मेरा हाथ पकड़कर वह खड़ा हुआ
मुझे वह नहीं जानता था
मेरे हाथ बढ़ाने को जानता था
हम दोनों साथ चले
दोनों एक दूसरे को नहीं जानते थे
साथ चलने को जानते थे।

इस कविता को लिखने वाले श्रद्धेय विनोद कुमार शुक्ल जी का जन्म 1 जनवरी 1937 को छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव में हुआ था। इनका पूरा जीवन साहित्य साधना को समर्पित रहा। वर्ष 2024 में साहित्य के सबसे बड़े पुरुषकार ज्ञानपीठ प्राप्त करने वाले विनोद कुमार शुक्ल जी ने 23 दिसंबर 2025 को रायपुर में अपने जीवन की अंतिम सांस ली। उनके निधन के साथ ही हिन्दी साहित्य के एक अध्याय का अंत हो गया। साधारण चीजों को असाधारण तरीके से लिखने में उन्हें महारत हासिल थी। उन्होंने हिन्दी साहित्य को एक नई सोच दी। वो कहते थे- "मैं जब भी कोई नई कविता लिखता हूं तो पहली कविता की तरह ही लिखता हूं। अब भी मैं जो कविता लिखता हूं, तो मैं उसी तरह लिखता हूं, जैसे मैं पहली कविता लिख रहा हूं। कविता लिखते समय हर बार ज़ेहन में यही बात रहती है कि मैंने अपना सर्वश्रेष्ठ तो कभी नहीं लिखा, और कोई भी लिखने वाला, अपने जीवन में सर्वश्रेष्ठ कभी नहीं लिखता। सर्वश्रेष्ठ तो हमेशा लिखा जाना बाकी रहता है।

विनोद कुमार शुक्ल जी की एक कविता है।

जागता हूँ तो सबकी नींद से
सोता हूँ तो सबकी नींद में
मैं अकेला नहीं
मुझमें लोगों की भीड़ इकट्ठी है
मुझे ढूँढो मत
मैं सब लोग हो चुका हूँ
मैं सबके मिल जाने के बाद
आख़िर में मिलूँगा
या नहीं मिल पाया तो
मेरे बदले किसी से मिल लेना.

लेकिन इतना तो सत्य है किसी और से मिलना विनोद कुमार शुक्ल से मिलना नहीं होगा । विनोद कुमार शुक्ल एक ही था और एक ही रहेगा। वो अपनी सरल साधारण और प्रभावी तरीके से लिखने के लिए हमेशा जाने जाते रहेंगे। कुछ लोग जो सोशल मीडिया पर उनके लेखन को लेकर अनर्गल प्रलाप कर रहें ,वो और कुछ नहीं अपने मन की भड़ास निकाल रहें हैं। और वैसे देखा जाय तो सोशल मीडिया आजकल लोगों की उल्टियों से भरा पडा है। लोग जो पचा नहीं पा रहें है ,सोशल मीडिया पर आकर उल्टी कर देते है।

अरुंधति रॉय अपनी नई किताब “मदर मैरी कम्स टू मी” को लेकर एक बार फिर सुर्खियों में है। इस नई किताब “मदर मैरी कम्स टू मी” के आवरण पर उनका एक चित्र है । जिसमें उनको बीड़ी पीते हुए दिखाया गया है। जिसको लेकर एक अलग ही बहस चल रही है। और तो और केरल हाई कोर्ट में एक वकील ने जनहित याचिका दायर की है। वे मांग कर रहे हैं कि अरुंधति रॉय की किताब की बिक्री पर रोक लगाई जाए।

समाज में सफल लोग यकीनन समाज पर असर डालते है , उनकी आदतें कई लोगों द्वारा अपनाई जाती है। तो अपने घर के अंदर आप क्या करते है और बाहर इसमें अवश्य ही बुद्धिमानी बरतनी चाहिए। क्योंकि समाज आपके प्रत्येक कार्य को बारीकी से देखता है ,और वैसा ही करने का प्रयास भी करता है। उसका अनुसरण करने का प्रयास करता है, कुछ अलग हटकर करने की चाहत में आजकल सारे लोग नए नए प्रयोग करते ही है ।ताकि उनका प्रयास उनका सृजन कुछ अलग हट के हो ,औरों से अलग दिखें।रातों-रात सोशल मीडिया पर उनका जादू चल जाएँ। समाज में शीर्षस्थ लोगों को अपने क्रियाकलापों को बरतनें में सावधान रहना चाहिए। यह उनकी नैतिक जिम्मेदारी है कि जिस समाज ने उन्हें प्रसिद्ध के शिखर पर पहुंचाया है,उसके बारे में सोचें और उसकी बेहतरी के लिए प्रयासरत हों।

मानवी पत्रिका परिवार की तरफ से खासकर इसकी प्रधान संपादक कविता सिंह जी की तरफ से आप सभी सहयोगी रचनाकारों को नए साल की बहुत बहुत बधाई एवं हार्दिक शुभकामनाएं। नये साल में आप सभी उत्कृष्ट सृजन कर समाज को एक नयी उन्नत दिशा की ओर ले जायें। और हां हमसे जुड़ें रहने के लिए ह्रदय से धन्यवाद। यह पत्रिका आप सभी रचनाकारों और पाठकों की है। आपका लेखन आपके सुझाव आपकी प्रतिक्रिया आपका मार्गदर्शन जैसे अब तक मिलता रहा है, वैसे ही आगे भी मिलता रहें, इसी उम्मीद और आग्रह के साथ एक बार पुनः आप सभी को नववर्ष की शुभकामनाएं। नववर्ष मंगलमय हो।

भगवान जगन्नाथ सबका कल्याण करें।

आपका
शुभेच्छु

काव्य धरोहर

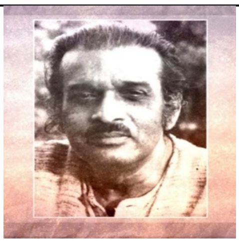

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

चाँदनी की पाँच परतें,
हर परत अज्ञात है

एक जल में,
एक थल में,
एक नीलाकाश में
एक आँखों में तुम्हारे झिलमिलाती,
एक मेरे बन रहे विश्वास में

क्या कहूँ, कैसे कहूँ
कितनी ज़रा-सी बात है
चाँदनी की पाँच परतें,
हर परत अज्ञात है

एक जो मैं आज हूँ,
एक जो मैं हो न पाया,
एक जो मैं हो न पाऊँगा कभी भी,
एक जो होने नहीं दोगी मुझे तुम,
एक जिसकी है हमारे बीच यह अभिशप्त छाया

क्यों सहूँ, कब तक सहूँ
कितना कठिन आघात है
चाँदनी की पाँच परतें,
हर परत अज्ञात है

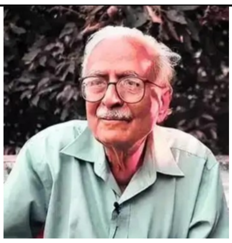

विनोद कुमार शुक्ल

जो मेरे घर कभी नहीं आएँगे
मैं उनसे मिलने

उनके पास चला जाऊँगा।
एक उफनती नदी कभी नहीं आएगी मेरे घर

नदी जैसे लोगों से मिलने
नदी किनारे जाऊँगा

कुछ तैरूँगा और डूब जाऊँगा
पहाड़, टीले, चट्टानें, तालाब

असंख्य पेड़ खेत
कभी नहीं आएँगे मेरे घर

खेत-खलिहानों जैसे लोगों से मिलने
गाँव-गाँव, जंगल-गलियाँ जाऊँगा।

जो लगातार काम में लगे हैं
मैं फ़ुरसत से नहीं

उनसे एक ज़रूरी काम की तरह
मिलता रहूँगा—

इसे मैं अकेली आख़िरी इच्छा की तरह
सबसे पहली इच्छा रखना चाहूँगा।

कोई लौटा दे वो चिट्ठियाँ

कृष्ण कुमार यादव

भारत सरकार में वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी। प्रशासन के साथ-साथ साहित्य, लेखन और ब्लॉगिंग के क्षेत्र में भी प्रवृत्त। विभिन्न विधाओं में अब तक कुल 7 पुस्तकें प्रकाशित- 'अभिलाषा' (काव्य-संग्रह, 2005), 'अभिव्यक्तियों के बहाने' व 'अनुभूतियाँ और विमर्श' (निबंध-संग्रह, 2006 व 2007), इत्यादि

सम्मान : उ.प्र. के मुख्यमंत्री द्वारा "अवध सम्मान", पश्चिम बंगाल के राज्यपाल द्वारा "साहित्य-सम्मान", छत्तीसगढ़ के राज्यपाल द्वारा "विज्ञान परिषद शताब्दी सम्मान", परिकल्पना समूह द्वारा "दशक के श्रेष्ठ हिन्दी ब्लॉगर दम्पति" सम्मान, अंतर्राष्ट्रीय ब्लॉगर सम्मेलन, भूटान में " परिकल्पना सार्क शिखर सम्मान", विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ, भागलपुर, बिहार द्वारा डॉक्टरेट (विद्यावाचस्पति) की मानद उपाधि, भारतीय दलित साहित्य अकादमी द्वारा "डॉ. अम्बेडकर फेलोशिप राष्ट्रीय सम्मान" साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा, राजस्थान द्वारा "हिंदी भाषा भूषण", वैदिक क्रांति परिषद, देहरादून द्वारा "श्रीमती सरस्वती सिंहजी सम्मान", भारतीय बाल कल्याण संस्थान द्वारा "प्यारे मोहन स्मृति सम्मान", आदि विभिन्न पुरुस्कारों से सम्मानित।

संपर्क सूत्र :पोस्टमास्टर जनरल,
उत्तरी गुजरात परिक्षेत्र, अहमदाबाद -380004
kkyadav.t@gmail.com

अभी हाल ही में मेरे एक मित्र की सगाई सम्पन्न हुई। पेशे से इंजीनियर और हाईटेक सुविधाओं से लैस मेरा मित्र अक्सर मोबाईल, वाट्सएप या सोशल मीडिया के द्वारा अपनी मंगेतर से जुड़ा रहता। तभी एक दिन उसे अपनी मंगेतर का हाथ से लिखा पत्र मिला। उसे यह जानकर ताज्जुब हुआ कि पत्र में तमाम ऐसी भावनायें व्यक्त की गई थीं, जो उसे अभी तक पता ही नहीं चली थीं। अब मेरे मित्र भी अपनी खूबसूरत मनोभावनाओं को मंगेतर को पत्र लिखकर प्रकट करने लगे हैं। इसी प्रकार बिहार के एक गाँव से आकर दिल्ली में बसे अधिकारी को अपनी माँ की बीमारी का पता तब चला जब वे एक साल बाद गाँव लौटकर गये। उन्हें जानकर आश्चर्य हुआ कि इतनी लंबी बीमारी उनसे कैसे छुपी रही, जबकि वे हर सप्ताह अपने घर का हाल-चाल मोबाइल फोन द्वारा लेते रहते थे। आखिरकार उन्हें महसूस हुआ कि यदि इस दौरान उन्होंने घर से पत्र-व्यवहार किया होता तो बीमारी की बात जरूर किसी न किसी रूप में पत्र में व्यक्त होती।

चिट्ठियाँ लिखना और पढ़ना किसे नहीं भाता। शब्दों के विस्तार के साथ बहुत सी अनकही भावनाएं मानो इन चिट्ठियों में सिमटती जाती थीं। आपको याद है, आपने अंतिम बार कब पत्र लिखा था ? वह लाल रंग का लेटर बाक्स याद है, जिसे हम बचपन में हनुमान जी का प्रतिरूप समझते थे, कि यह हमारे डाले गए पत्रों को रात में उड़कर गंतव्य स्थान तक पहुँचा देते हैं। न जाने कितनी बार स्कूल के दिनों में परिजनों को रात में जागकर चिट्ठियाँ लिखी होंगीं। पर आज इंटरनेट, ई-मेल, मोबाईल, वाट्सएप और सोशल मीडिया ने मानो पत्रों की दुनिया ही बदल दी हो। प्रसिद्ध अंग्रेजी साहित्यकार लॉर्ड बायरन पत्र को एकांत का साथी मानते थे। उनका मानना था कि अगर तुम एकांत में सबसे अच्छे मित्र की तलाश में हो, तो अपने किसी को पत्र लिखो। यह जीवन की धूप-छांव में सबसे ईमानदारी भरा पल होगा, जो तुम्हें अपने सबसे करीब ले पाएगा। बायरन का कहना था कि पत्र लेखन एक प्रकार का चिंतन है, जो मस्तिष्क को स्थिरता देता है। पत्र लिखना जितना मायने रखता है, उतना ही उसे पढ़ना भी।

सभ्यता के आरम्भ से ही मानव किसी न किसी रूप में पत्र लिखता रहा है। दुनिया का सबसे पुराना ज्ञात पत्र 2009 ईसा पूर्व का बेबीलोन के खण्डहरों से मिला था, जोकि वास्तव में एक प्रेम पत्र था और मिट्टी की पटरी पर लिखा गया था। कहा जाता है कि बेबीलोन की किसी युवती का प्रेमी अपनी भावनाओं को समेटकर उससे जब अपने दिल की बात कहने बेबीलोन तक पहुँचा तो वह युवती तब तक वहाँ से जा चुकी थी। वह प्रेमी युवक अपनी भावनाओं पर काबू नहीं रख पाया और उसने वहीं मिट्टी के फर्श पर खोदते हुए लिखा-"मैं तुमसे मिलने

आया था, तुम नहीं मिली।" यह छोटा सा संदेश विरह की जिस भावना से लिखा गया था, उसमें कितनी तड़प शामिल थी। इसका अंदाजा सिर्फ वह युवती ही लगा सकती थी जिसके लिये इसे लिख गया। भावनाओं से ओत-प्रोत यह पत्र 2009 ईसा पूर्व का है और इसी के साथ पत्रों की दुनिया ने अपना एक ऐतिहासिक सफर पूरा कर लिया है।

जब संचार के अन्य साधन न थे, तो पत्र ही संवाद का एकमात्र माध्यम था। दुनिया के किसी खामोश कोने में बैठकर दूसरे कोने में बैठे किसी अनाम साथी से संवाद, ऊश्मा से ज्यादा उत्तेजना का सबब हो जाता है। यह एकालाप नहीं बल्कि अकेलेपन से जोड़ने और अपनी संवेदनाओं को मजबूत करने का जरिया है। पत्रों का काम मात्र सूचना देना ही नहीं बल्कि इनमें एक अजीब रहस्य या गोपनीयता, संग्रहणीयता, लेखन कला एवं अतीत को जानने का भाव भी छुपा होता है। पत्रों की सबसे बडी विशेशता इनका आत्मीय पक्ष है। यदि पत्र किसी खास का हुआ तो उसे छुप-छुप कर पढ़ने में एवम् संजोकर रखने तथा मौका पाते ही पुराने पत्रों के माध्यम से अतीत में लौटकर विचरण करने का आनंद ही कुछ और है।

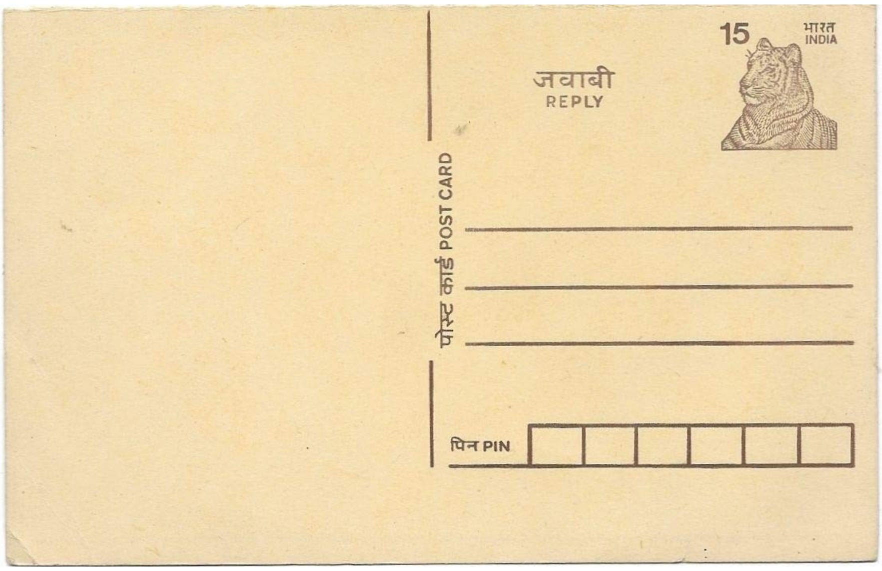

पत्रों की दुनिया बेहद निराली है। दुनिया के एक कोने से दूसरे कोने तक यदि पत्र अबाध रूप से आ-जा रहे हैं तो इसके पीछे 'यूनिवर्सल पोस्टल' यूनियन का बहुत बड़ा योगदान है, जिसकी स्थापना 9 अक्टूबर 1874 को स्विटजरलैंड में हुई थी। यह 9 अक्टूबर पूरी दुनिया में 'विश्व डाक दिवस' के रूप में मनाया जाता है। तब से लेकर आज तक डाक-सेवाओं में वैश्विक स्तर पर तमाम क्रांतिकारी परिवर्तन आए हैं और भारत भी इन परिवर्तनों से अछूता नहीं हैं। डाक सेवाओं का इतिहास बहुत पुराना है, पर भारत में एक विभाग के रूप में इसकी स्थापना 1 अक्तूबर 1854 को लार्ड डलहौजी के काल में हुई। डाकघरों में बुनियादी डाक सेवाओं के अतिरिक्त बैंकिंग, वित्तीय व बीमा सेवाएं भी उपलब्ध हैं। एक तरफ जहाँ डाक-विभाग सार्वभौमिक सेवा दायित्व के तहत सब्सिडी आधारित विभिन्न डाक सेवाएं दे रहा है, वहीं पहाड़ी, जनजातीय व दूरस्थ द्वीप समूह जैसे क्षेत्रों में भी उसी दर पर डाक सेवाएं उपलब्ध करा रहा है।

आजादी के आन्दोलन में भी चिट्ठियों का बड़ा योगदान रहा है। इस दौर में तमाम क्रान्तिकारी नायकों ने भी बड़ी संख्या में हरकारों की भर्ती कर रखी थी, जो उनके लिए गुप्त खबरें भी लाते थे। कानपुर में नाना साहब के दरबार में एक हरकारे गिरधारी ने ही मेरठ विद्रोह की खबर सर्वप्रथम पहुँचाई थी, जिसे बाद में अंग्रेजों ने मौत के घाट उतार दिया। यह अनायास ही नहीं था कि 1857 के बाद से डाकघर और डाकिये बराबर क्रान्तिकारियों के निशाने पर रहे। 1857 की क्रान्ति के दौरान जब क्रान्तिकारियों ने कानपुर में अंग्रेजों की संचार व्यवस्था ध्वस्त कर दी तो सेनापति कोलिन थेंप विल ने पत्र द्वारा गर्वनर जनरल लार्ड केनिंग को यहाँ के बारे में सूचित करते हुए सलाह दी कि जब तक अंग्रेजी सेनायें अवध को काबू में नहीं करेंगी, तब तक क्रान्ति की चिंगारी यूँ ही फैलती रहेगी। कालान्तर में भी डाकिये लोगों के निशाने पर रहे, क्योंकि अंग्रेजों के पास संचार माध्यम का यह सबसे सशक्त साधन था।

पत्रों को सही जगह पहुँचाने का डाकियों का गुण किसी से भी नहीं छुपा है। गाँधी जी के पास तो रोज सैकड़ों पत्र आते थे और वे व्यक्तिगत रूप से इन सभी का जवाब देते थे। महात्मा गाँधी तो पत्र लिखने में इतने सिद्धहस्त थे कि दाहिने हाथ के साथ-साथ वे बाएं हाथ से भी पत्र लिखते थे। डाक विभाग भी इतना मुस्तैद था कि मात्र "गाँधी जी" लिखे पते के आधार पर उन्हें कहीं भी चिट्ठियाँ पहुँचा देता था। यह अनायास ही नहीं है आज भी डाक-टिकटों पर भारत में सबसे ज्यादा गाँधी जी के ही दर्शन होते हैं। पं. जवाहर लाल नेहरू अपनी पुत्री इन्दिरा गाँधी को जेल से भी पत्र लिखते रहे। ये पत्र सिर्फ पिता-पुत्री के रिश्तों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि इनमें तात्कालिक राजनैतिक एवं सामाजिक परिवेश का भी सुन्दर चित्रण है। इन्दिरा गाँधी के व्यक्तित्व को गढ़ने में इन पत्रों का बहुत बड़ा हाथ रहा है। आज ये किताब के रूप में प्रकाशित होकर ऐतिहासिक दस्तावेज बन चुके हैं। इन्दिरा गाँधी ने इस परम्परा को जीवित रखा एवं दून में अध्ययनरत अपने बेटे राजीव गाँधी को घर की छोटी-छोटी चीजों और तात्कालिक राजनैतिक-सामाजिक परिस्थितियों के बारे में लिखती रहीं। एक पत्र में तो वे राजीव गाँधी को

रीवा के महाराज से मिले सौगातों के बारे में भी बताती हैं। तमाम राजनेताओं-साहित्यकारों के पत्र समय-समय पर पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित होते रहते हैं। इनसे न सिर्फ उस व्यक्ति विशेष के संबंध में जाने-अनजाने पहलुओं का पता चलता है बल्कि तात्कालिक राजनैतिक-सामाजिक-साहित्यिक-सांस्कृतिक परिवेश के संबंध में भी बहुत सारी जानकारियाँ प्राप्त होती हैं। इसी ऐतिहासिकता के कारण आज भी पत्रों की नीलामी लाखों रूपयों में होती हैं। तभी तो दिलीप कुमार ने 'ब्लैक' फिल्म देखने के बाद अमिताभ बच्चन को जो बधाई पत्र लिखा था, उस पत्र को अमिताभ ने अपने ड्रांइग रूम में सजा दिया है।

पत्रों को लेकर तमाम बातें कही जाती हैं। हम सभी ने वो वाली कहानी सुनी है, जिसमें एक किसान पैसों के लिए भगवान को पत्र लिखता है और उसका विश्वास कायम रखने के लिए पोस्टमास्टर अपने स्टाफ से पैसे एकत्र कर उसे मनीऑर्डर करता है। आर. के. नारायण की एक कहानी है - पोस्टमैन। उसमें एक डाकिया किसी की मृत्यु के बारे में आई एक चिट्ठी लंबे समय तक अपने पास रोके रखता है क्योंकि गाँव में एक लड़की की शादी की तैयारियां चल रही हैं। चिट्ठियों से हमारे समाज के भावनात्मक संबंध ने उसे हमारे साहित्य और सिनेमा में बखूबी स्थान दिया है।

कहते हैं कि पत्रों का संवेदनाओं से गहरा रिश्ता है और यही कारण है कि पत्रों से जुड़े डाक विभाग ने तमाम प्रसिद्ध विभूतियों को पल्लवित-पुष्पित किया है। अमेरिका के राष्ट्रपति रहे अब्राहम लिंकन पोस्टमैन तो भारत में पदस्थ वायसराय लार्ड रीडिंग डाक वाहक रहे। विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक व नोबेल पुरस्कार विजेता सी.वी. रमन भारतीय डाक विभाग में अधिकारी रहे वहीं प्रसिद्ध साहित्यकार व 'नील दर्पण' पुस्तक के लेखक दीनबन्धु मित्र पोस्टमास्टर थे। ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित लोकप्रिय तमिल उपन्यासकार पी.वी. अखिलंदम, राजनगर उपन्यास के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित अमियभूषण मजूमदार, फिल्म निर्माता व लेखक पद्मश्री राजेन्द्र सिंह बेदी, मशहूर फिल्म अभिनेता देवानन्द डाक कर्मचारी रहे हैं। उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द जी के पिता अजायबलाल डाक विभाग में ही क्लर्क रहे। ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता मशहूर लेखिका महाश्वेता देवी ने आरम्भ में डाक-तार विभाग में काम किया था तो प्रसिद्ध बाल साहित्यकार डॉ. राष्ट्रबन्धु भी पोस्टमैन रहे। सुविख्यात उर्दू समीक्षक पद्मश्री शम्सुररहमान फारूकी, शायर कृष्ण बिहारी नूर, महाराष्ट्र के प्रसिद्ध किसान नेता शरद जोशी सहित तमाम विभूतियाँ डाक विभाग की गोद में अपनी सृजनात्मक-रचनात्मक काया का विस्तार पाने में सफल रहीं।

हाल ही में एक रिपोर्ट पर जाकर निगाह अटकी कि, जज्बातों को अल्फाज देती, कागज के कुछ पन्नों में सिमटी चिट्ठी लिखने की कला मानो खत्म सी होती जा रही है। ब्रिटेन में चैरिटी वर्ल्ड विजन द्वारा हुए एक सर्वेक्षण के अनुसार प्राइमरी स्कूल में पढ़ने वाले करीब 50 फीसदी बच्चे ठीक से नहीं जानते कि चिट्ठी कैसे लिखी जाती है। सात से लेकर 14 साल के बच्चों से पूछा गया कि क्या उन्होंने पिछले एक साल में चिट्ठियाँ लिखने की कोशिश की है तो चार में से एक बच्चे का जवाब था, नहीं। जबकि पिछले एक हफ्ते में इनमें से 50 फीसदी से ज्यादा बच्चों ने ईमेल किया है या सोशल नेटवर्किंग साइट पर संदेश भेजे हैं। अध्ययन से पता चलता है कि बहुत से बच्चे न तो चिट्ठियाँ लिखते हैं, न ही उन्हें किसी की चिट्ठी मिलती है। आँकड़ों के मुताबिक पाँच में एक बच्चे को कभी किसी ने चिट्ठी नहीं लिखी। करीब 45 फीसदी बच्चों ने कहा कि या तो उन्हें चिट्ठी लिखनी बिल्कुल नहीं आती या वे पक्के तौर पर नहीं कह सकते। ये सर्वेक्षण ब्रिटेन के 1188 बच्चों में किया गया। वाकई यह स्थिति सोचनीय है। बच्चों की शिक्षा से जुड़े मामले की विशेषज्ञ सू पामर कहती हैं, "जब आप खुद कलम से कुछ लिखते हैं तो इसके जरिए लिखने वाला ये दर्शाता है कि वे उस रिश्ते को अपना वक़्त दे रहा है। तभी तो हम पुरानी चिट्ठियों को संभाल कर रखते हैं।"

जब संचार के अन्य साधन न थे तो डाकिया लोगों के लिए देवदूत बनकर आता था। लोगों की निगाहें डाकिया बाबू का इंतज़ार करती थीं। डाकिया प्राकृतिक आपदाओं, जंगली जानवरों, भूभागी कठिनाइयों तथा डाकुओं आदि की बाधाओं को पार करते हुए अपने कर्तव्य का पालन करता था। रवींद्र नाथ टैगोर के नाटक "डाकघर" में चौकीदार द्वारा छोटे लड़के को इस तथ्य को कितनी अच्छी तरह बताया गया है- "हा...हा....डाकिया, यकीनन बरसात हो या लू, अमीर हो या गरीब, सबको घर-घर जाकर चिट्ठी बांटना उसका काम है यह बहुत बड़ी बात है।" वाकई चाहे बरसात हो या ठण्ड, डाकिया एक ही थैले में सुख और दुःख दोनों को बांटने वाला दूत समझा जाता था? तभी तो भूतपूर्व संचार मंत्री श्री स्टीफेन ने भोपाल में डाक-तार के उद्घाटन के अवसर पर कहा था कि- "अगर स्वर्ग में एक जगह खाली हो और भगवान को सभी विभागों के कर्मचारियों में से किसी एक का चयन उस जगह के लिये करना हो तो वे 'डाकिये' का ही चयन करेंगे क्योंकि उसने जीवन भर दूसरों के सन्देश घर-घर तक पहुँचाकर जो पुण्य कमाया है वह कोई दूसरा कर्मचारी नहीं कमा सकता।" उर्दू के जाने माने शायर निदा फाजली ने क्या खूब लिखा है-

सीधा-सादा डाकिया जादू करे महान ।
एक ही थैले में रखे आंसू और मुस्कान ।।

प्रेम की बात की जाये और डाकिया का जिक्र न हो तो अधूरा सा लगता है। कालिदास ने तो अपने प्रेम के लिए मेघों को ही दूत बना लिया, पर वास्तविक जीवन में भी

डाकियों ने प्रेम-दूत का काम बखूबी निभाया है। याद कीजिये वह हिंदी फिल्म का गीत जिसमें नायिका दूर शहर चले गए अपने प्रेमी को खत लिखने के लिए डाकिया से मिन्नतें करती है-

खत लिख दे सांवरियां के नाम बाबू ।
कोरे कागज पे लिख दे सलाम बाबू ।।
वो जान जाएंगें, वो मान जाएंगें -
कैसे होती है सुबह से शाम बाबू ।।

इंटरनेट, मोबाइल और सोशल मीडिया के इस दौर में युवा पीढ़ी भले ही डाकिया को अपने लिए अनजाना समझती हो, पर डाकिया आज भी प्राय: हर दरवाजे पर दस्तक लगाता है। संचार क्रांति और सूचना प्रौद्योगिकी के इस दौर में सन्देश भेजने के तमाम साधन इन डाकियों के सामने ही दम तोड़ते चले गए, पर डाकिया का अस्तित्व अभी भी कायम है। पुराने जमाने के टेलीग्राफ से लेकर नए दौर के पेजर तक की सेवाएँ ख़त्म हो गईं, टेलीफोन की जगह मोबाईल ने ले ली और एस. एम. एस. का वजूद वाट्सएप ख़त्म कर गया, पर चिट्ठी-पत्री का दौर अभी भी ख़त्म नहीं हुआ। डाकिया के थैले में व्यक्तिगत पत्रों की बजाय अब सरकारी डाक, कॉरपोरेट डाक, पत्र-पत्रिकाओं, पार्सल की संख्या भले ही बढ़ गई हो, पर बदलते दौर के साथ डाकियों की भूमिका भी बदल रही है। । इण्डिया पोस्ट पेमेंट बैंक की स्थापना के बाद आर्थिक और सामाजिक समावेशन के तहत ग्रामीण पोस्टमैन चलते -फिरते एटीएम के रूप में नई भूमिका निभा रहा है। आई. टी. मॉडर्नइजेशन के मध्यम से डाकिया अपनी नई भूमिका को नई चुनौतियों के साथ स्वीकारने को तत्पर है और निश्चितत: डिजिटल इण्डिया, वित्तीय समावेशन से लेकर न्यू इंडिया तक की संकल्पना को समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचाने में डाकियों की अहम भूमिका है।

आज टेक्नालाजी के दौर में लोग पत्रों की अहमियत भूलते जा रहे हैं, पर इसी के साथ वो आत्मीयता भी गुम होती जा रही है। भावनाओं के विलोपन के साथ-साथ अब वास्तविक जीवन से धीरे-धीरे चिट्ठियाँ लुप्त हो रही है। कभी डाकिया की राह ताकते रहने वाला समाज आज अपने प्रियजनों का हाल जानने के लिए अपने मोबाईल फोन पर वाट्सएप, ई-मेल के इनबॉक्स और सोशल मीडिया मसलन-फेसबुक व ट्विटर पर क्लिक कर रहा है। पर चिट्ठियाँ अब रूप बदलकर सामने आ रही हैं। जब टेलीफोन ने चिट्ठियों को आउटडेटेड किया था तो किसने सोचा था कि ये चिट्ठा बनकर फिर सामने आ जायेंगी। यही क्यों, फेसबुक और ट्विटर पर दिनभर की अपडेट देने वाले भी एक तरह से चिट्ठियाँ लिखते हैं। फर्क मात्र इतना है कि वे हाथ से लिखी गयी चिट्ठियाँ थी और यह स्मार्टफोन, टेबलेट और लैपटॉप पर लिखी गयी हैं। यहाँ पाश्चात्य विचारक गैरिसन कीलर की किताब 'लिविंग होम' का जिक्र जरूरी है। किताब में वह लिखते हैं कि पत्र लेखन इस दुनिया का सरलतम कार्य है, जो हमारे जीवन से लुप्त हो रहा है। इसीलिए वह कहते हैं कि पत्र-सा कोई उपहार नहीं। इसे देने का विचार मत कीजिए, बस दीजिए। गैरिसन कहते है कि किसी भी पत्र को लिखते समय व्याकरण और शैली की बात सोचना व्यर्थ है। आप बस अपने समाचार देते जाइए। आप कहां गए, किस-किस से मिले, उन्होंने क्या कहा, आप क्या सोचते है? इससे न केवल आप धन्य होंगे, बल्कि पत्र पाने वाला भी। पत्र हमें एक भावनात्मक सूत्र में बंधे होने का एहसास कराते हैं। गैरिसन की यही बात ब्लॉग व सोशल साइट्स पर भी लागू होती है, जहाँ लोग एक दूसरे से छोटी छोटी बातें साझा कर रहे हैं और लोग उन्हें हाथों-हाथ ले रहे हैं। 'इंस्टेंट' के इस दौर में रिश्ते-नाते, सम्बन्ध, भावनाएं सब कुछ 'इंस्टेंट' हो गए हैं। कट-पेस्ट, लाइक, शेयर, के इस दौर में भला किसे फुर्सत है लम्बी चिट्ठियों या चिट्ठों को पढ़ने की। भला हो उन कुछेक लोगों का, जिन्होंने इन विधाओं को जिन्दा रखा है। खत्म होना तो हर किसी की नियति है, पर अपने दौर में परिवेश को कोई भी व्यक्ति या विधा कितना प्रभावित कर पाई, यह महत्वपूर्ण है।

चिट्ठियों से चिट्ठों और सोशल नेटवर्किंग साइट्स तक के इस सफर में बहुत कुछ बदला है, आगे भी बदलेगा। हाई-टेक होते इस दौर में कलम का स्थान की-बोर्ड ने ले लिया है। शब्दों के भावार्थ बदलने लगे हैं, उनमें शुद्धता नहीं बल्कि चलताऊपन आ गया है। पर जब यही बात रिश्तों-संवेदनाओं पर लागू होती है तो असहजता महसूस होती है। चिट्ठियाँ लिखना कम हुआ तो लिफाफा देख मजमून भांपने वाली पूरी जमात का अस्तित्व खतरे में है। मोबाइल फोन और कम्प्यूटर से कुछ भांपा नहीं जा सकता। पर इन सबके बीच यह बेहद जरूरी है कि संवेदनाएं अपना रूप न परिवर्तित करें। टेक्नालाजी ने दिलों की दूरियाँ इतनी बढ़ा दी हैं कि बिल्कुल पास में रहने वाले अपने इश्ट मित्रों और रिश्तेदारों की भी लोग खोज-खबर नहीं रखते। ऐसे में युवा पीढ़ी के अंदर संवेदनाओं को बचा पाना कठिन हो गया है। तभी तो पत्रों की महत्ता को देखते हुए एन.सी.ई.आर.टी. को पहल कर कक्षा आठ के पाठ्यक्रम में "चिट्ठियों की अनोखी दुनिया" नामक अध्याय को शामिल करना पड़ा। चिट्ठियों/पत्रों को लेकर गए गए न जाने कितने गीत आज भी होंठ गुनगुना उठते हैं। तभी तो अन्तरिक्ष-प्रवास के समय सुनीता विलियम्स अपने साथ भगवद्गीता और गणेशजी की प्रतिमा के साथ-साथ पिताजी के हिन्दी में लिखे पत्र ले जाना नहीं भूलती। हसरत मोहानी ने यूँ ही नहीं लिखा था-

लिक्खा था अपने हाथों से जो तुमने एक बार।
अब तक हमारे पास है वो यादगार खत ।।

प्रस्तुति:- बसन्त राघव

(पुण्यतिथि विशेष)

जब बाबा ने मेरे कान उमेंठे -डाँ.बलदेव

बाम्बे - हावड़ा मार्ग पर एक छोटा - सा स्टेशन है , नैला । स्टेशन से दो किलोमीटर की दूरी पर कलचूरी राजा जाज्वल्यदेव द्वारा बसाया गया नगर है जांजगीर , जो मध्ययुग से ही मीम्मा तालाब और विष्णु के फूटहा मन्दिर के कारण प्रसिद्ध है । हिन्दी के कवि शेष नाथ शर्माशील , बच्चू जांजगीरी और विद्याभूषण का यह जन्मस्थान भी है , स्वाभाविक है यहाँ साहित्यिक हलचल स्वतन्त्रता के पूर्व से रही है , एक बार यहाँ घुमक्कड़ बाबा नागार्जुन आए थे , और उनके सम्मान में शासकी प्रशिक्षण विद्यालय में एक काव्य गोष्ठी हुई थी , घटना विशेष के कारण यह ऐक्यालीस , ब्यालिस साल के बाद भी अविस्मरणीय है , जैसे अभी हाल में ही घटी है ।

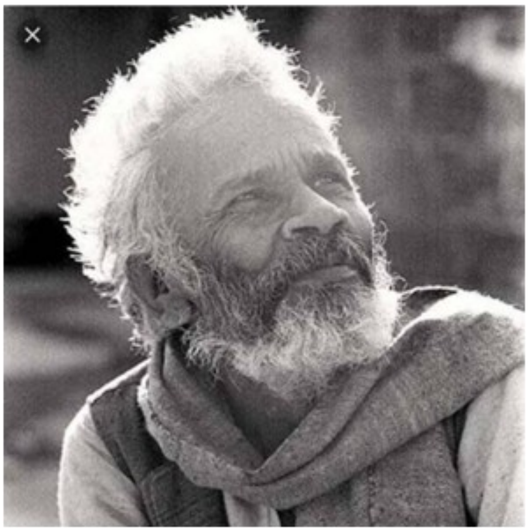

बात सन् 1968 के फरवरी महीने के किसी खुशनुमा दिन की है , उस समय मैं हायर सेकेंड्री जांजगीर में शिक्षक था उसके सामने वाली जगह में स्थित राजकीय बुनियादी प्रशिक्षण संस्था के सभा भवन में , काव्य गोष्ठी थी । गोष्ठी हिन्दी के चर्चित कवि नागार्जुन के सम्मान में होने जा रही थी । स्वागत द्वार पर संस्था के प्राचार्य श्री एच.एस.मिश्रा , मल्टीपरपज के प्राचार्य एन.पी. शर्मा तथा हायर सेकेंड्री के प्राचार्य श्री रामशरण तम्बोली ने फूलमालाओं से नागार्जुन का भव्य स्वागत किया , तत्पश्चात शिक्षक एवं प्रशिक्षार्थियों ने उन्हें फूलमालाओं से लाद दिया । सभा भवन के तीन हिस्से पर दरियाँ बिछी हुई थीं जिस पर खद्दर के पाजामा कुर्ता में प्रशिक्षार्थी एवं शिक्षकगण बैठे हुए थे फर्श से एक डेढ़ फीट की ऊँचे मंच पर लकझक गद्दे बिछे हुए थे । बीच में दो गाव तकिए । एक मुख्य अतिथि के लिए दूसरे संचालक के लिए । आमन्त्रण पर मुख्य अतिथि श्री नागार्जुन और संचालन के लिए श्री रामशरण तम्बोली ने आसन ग्रहण किया ।

शुभ्र वस्त्रों की धवलता के बीच , बाबा नागार्जुन पट्ट देहाती दिखाई दे रहे थे । उनका पाजामा कुर्ता घुम्कड़ी होने का सन्देश दे रहे थे । सामान्य कद , दुबली पतली काया , अधपके बाल , खिचड़ी दाढ़ी , घुसी हुई सामने वाले की आँखों में गड़ जाने वाली आँखें , दिखने में पूरी अघौरी ।

नागार्जुन आसन क्या लेते गाव तकिया संचालक की ओर सरका दिया । संचालक की अतिश्योक्तिपूर्ण अभ्यर्थना को वे विचित्र भाव से सुन रहे थे । दो मिनट में ही उनका चेहरा लाल हुआ , बोले बस भी करो गुरुजी , कार्यक्रम शुरू करो इस अप्रत्याशित हमले से संचालन कर रहे कवि जी कट से गट तुकबंदी वे भूल से गए फिर सम्भले और उन्होंने कवियों को आमन्त्रित करना शुरू किया -

दिखने को पहलवान है रोज लगाते दण्ड
अब काव्य पाठ करने आवे कविवर श्री भरबंडतम्बोलीजी की आवाज में खिंचाव था । कोने से एक पहलवाननुमा कवि मंच को ओर लपके । कवि क्या थे पूरे विदूषक थे , उनके पहनावे , कपड़े और चलने की मुद्रा से ही सभाभवन में हँसी का फव्वारा फूटा । अपनी ओर बीररस की मूर्ति को आते हुए नागार्जुन कौतुक निगाह से देख रहे थे । पैर छूने के बाद वीर भरबंड ने मूँछे ऐंठते हुए हास्य रस की कविता वीर रस में पढ़ी।

तुम बाटा की सैंडिल हो तो मैं चमरौधा का जूता हूँ
तुम मेम साहिब की नेकलेस तो मैं जंजगीरहिन का सूता हूँ

बस क्या था , तालियों की गड़गड़ाहट शुरू हो गई , कवि महोदय ने उत्साहित होकर इन पंक्तियों को कई बार पढ़ा , इस पर बाबा ने मजाकिए स्वर में कहा - थोड़ा और आगे बढ़ो उस्ताद । कवि ने फिर चीखते हुए पंक्तियाँ पढ़ीं -

तुम तो रस भरी जलेबी हो , मैं शम्भु का आलू गुंडा हूँ
लखनऊ की तुम बेगम हो , मैं खोखरा का मुस्तंडा हूँ

तालियों की गड़गड़ाहट के बीच जब तम्बोलीजी ने नरेन्द्र श्रीवास्तव का नाम पुकारा तो सभा में पिनड्राप साइलेंस हो गया, उन्होंने प्रसन्न मन से विलम्बित स्वर में गाया -

हाथों पर गंगाजल है फिर भी प्यास नहीं जाती
दिन की बातें कहने में रात बेचारी शरमाती

इसके बाद मधुर गीतकार विद्याभूषण मिश्र ने गोष्ठी को अपने गीत से ऊँचाई दी :-

साँसों की गोपियाँ बिलखती ,
मन का वृन्दावन जलता है
मेरा कृष्ण कन्हैया मुझको ,
भूखा प्यासा ही लगता है

मिश्र जी खूब जमे । बाबा ने नरेन्द्र श्रीवास्तव और मिश्रजी की खूब तारीफ़ की , उनका मूड काफी अच्छा बन गया था । अब संचालक महोदय ने फिर तुकबंदी का सहारा लिया:-

देखन में सूधो लगे ज्यों बछिया के ताऊ
अब काव्य पाठ करें प्रियवर श्री बलदाऊ

इससे बाबा उखड़ गए । केहिनू मारते हुए चीखे - ये क्या दो - दो पंक्तियों में टुच्च - टुच्च मार रहे हो , बीच - बीच में अपनी तुकबन्दी घुसेड़ रहे हो , अब कवियों को सीधे उनके नाम से बुलावो । बाबा के धक्के से तम्बोली जी सकपका गए , वे कुछ बोलते इसके पूर्व उनके हाथों का इशारा हुआ , अब तुम पढ़ो । बाबा ने दुहराया - हाँ हाँ तुम पढ़ो - मैंने कुछ अतिरिक्त चेतना से काव्य पाठ शुरू किया - कविता का शीर्षक है , अन्धेरे में :-

"किस नदी में तलहटी में गुफा या वीरान खंडहर में
नथुने पर उठाए बेहोश शहर को यह कामातुर पशु ले जाएगा
रात के अन्धेरे में कहा नहीं जा सकता और मैं सहता रहूँगा
अनहोनी घटना की अनभोजन पीड़ा को
उसके जबड़े में फँसे हाथ को
खींचते न खींचते घसीट खाता लोहू लुहान
कुछ नहीं कर सकूँगा , अपने लिए शहर के लिए
क्योंकि मैं जानता हूँ , जब यह शहर होश में आएगा
इसकी योनि - गन्ध में और बहक जाएगा
नदी की उफनती शराब और गटक जाएगा
मादा पशु पूंछ उठाकर लार टपकाएगी ,
खुरदरी जीभ से चाटकर प्यार जताएगी

बाबा चीखे , लपककर कान पकड़े और यह कहते उमेठे - बन्द करो , तुम्हें शर्म नहीं आती , मुझ बूढ़े के सामने ऐसी कविता सुनाते हुए , मैं कुछ सफाई देता कि बाबा और बुरी तरह उखड़ गए , बोले - बस बन्द करो । मुझे नहीं सुनना तुम्हारी कविता और अपने झोला बैग को खींचने लगे । बड़बड़ाए अभी बहुरानी होती तो क्या - क्या गन्ध होती है तुम्हें बतलाता । बाबा के क्रोध से पूरी सभा दहल गई । सभी चकित साहस करके हमारे सीनियर लेक्चरर बिस्नोईजी हाथ जोड़कर बोले , ' बाबा क्षमा करो , बलदेव अभी नया कवि है , प्रतिभाशाली कवि है , अनजाने ही उससे यह भूल हो गई ।'

अब तो बाबा अकड़ गए बोले - अब तो तुम्हारा प्रतिभा सम्पन्न कवि अपनी कविता पूरी कर ले लभी कार्यक्रम होगा । मैं पूरी तरह नर्वस हो गया था , लेकिन विश्नोई सर के वाक्य से कुछ राहत मिली , मैं खड़ा हो गया और साहस जुटाकर बोला । बाबा माफ़ करें , मैं आपसे कुछ पूछना चाहता हूँ ।

बाबा अक्खड़ थे , तुरन्त बोले - हाँ पूछो ?

आदरणीय से पूछना चाहता हूँ - शलभ श्री रामसिंह क्या आपके पास रहते हैं ?

हाँ ! तो - नागार्जुन ने दागते हुए पूछा ।

उन्होंने मरी हुई औरत के साथ संभोग लिखा , तब तो आपकी कोई प्रतिक्रिया पढ़ने को नहीं मिली ?

अच्छा तो तुम भी शलभ श्रीराम सिंह बनना चाहते हो ।

-नहीं , मेरा मतलब

-मतलब - उतलब कुछ नहीं , मैं चाहता हूँ , हमारी नई पीढ़ी अच्छी से अच्छी कविता लिखे , प्रयोग के लिए प्रयोग न करे ।

इतने में ही कुछ सज्जन सभा भवन में और आ गए , तब कहीं बावा शान्त हुए , बाबा बोले , अब कामद गन्ध करके कविता फिर से पढ़ो , मैंने उनके आदेश का पालन किया । बाबा प्रसन्न होते हुए बोले - हाँ भई अब ठीक है । जैसे - तैसे मैंने डरते हुए कविता अन्त तक पढ़ी । मैं नर्वस हो रहा था लेकिन बाबा ने मुझे अन्त तक प्रोत्साहित किया । अब संचालक महोदय ने बाबा नागार्जुन को आत्मसम्मानसूचक शब्दों से काव्यपाठ के लिए आमन्त्रित किया । बगैर भूमिका के बावा ने पाठ शुरू किया :-

हाँ ! सुनो अकाल के बाद की एक कविता

कई दिनों तक चूल्हा रोया , चक्की रही उदास ,

कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त

सपाट बयानी की यह कविता अपनी सम्प्रेषणीयता में बेजोड़ है,यह विश्वविद्यालयीन पाठ्यक्रम में लगी हुई थी , अस्तु कई पंक्तियाँ श्रोताओं की ओर से दोहराई गई । बाबा ने गद्गद् होकर चुटकी बजाते इसकी उत्तरार्ध की पंक्तियाँ पढ़ी:-

दाने आए घर के अन्दर कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आँगन में ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद

कई दिनों के बाद की रेहटारिक श्रोताओं के बीच गूंजती रही । फिर बाबा ने कहा - गाँव की जनचेतना की एक झाँकी यहाँ देखिए:-

घोर निर्जन में परिस्थितियों ने दिया है जल
याद आता है तुम्हारा सिन्दूर तिलकित भाल

सिन्दूर तिलकित भाल कहते - कहते बाबा दूर कहीं खो जाते । मिथिला की स्मृति ने उन्हें भाव विभोर कर दिया । आगे उनका स्वर फूटा :-

याद आता मुझे अपना वह तरउनी ग्राम
याद आती लीचियाँ वे आम
याद आते मुझे मिथिला के रुचिर भू - भाग
याद आते धान
याद आते कमल , कुभुर्विन और ताल मखान

के.पी. सिंह जो मिथिला के ही थे , इन पंक्तियों पर अपने को रोक न सके ... वाह बाबा ! आपने क्या बात कही , नागार्जुन ने उन्हें बगैर भाव दिए कविता आगे पढ़ी :-

कौन है वह व्यक्ति जिसको चाहिए न समाज
कौन है वह एक जिसको नहीं पड़ता दूसरों से काज
चाहिए किसको नहीं सहयोग
चाहिए किसको नहीं सहवास

इस कविता में पत्नी के प्रति औघड़ बाबा की तीखी अनुरक्ति से साक्षात्कार हुआ जा सकता था । कविता पढ़ने के बाद बाबा मौन हुए ... श्रोता और सुनने के लिए उत्कंठित हो रहे थे , मैं थोड़ा झिझकते हुए खड़ा हुआ , अति भावुकता के साथ बोल पड़ा । बाबा बादल को घिरते देखा है , कविता सुनना चाहते हैं , कृपा करके उस कालजयी रचना को सुनाने की कृपा कीजिए । बाबा ने तुरन्त कहा , ' अच्छा तो सुनो । उन दिनों मैं हिमालय की घाटियों में घूमता था , अचानक एक दिन उसका समूचा परिदृश्य मेरे समाने साकार हुआ , इसकी पंक्तियाँ आप ही आप जुड़ती गईं - बहुत लम्बी कविता है , देखिए जितनी याद आए सुनाता हूँ - बाबा के चेहरे पर हिमालय की अपूर्व छटा छाने लगी:-

अमल धवल गिरि के शिखरों पर
बादल को घिरते देखा है
बादल को तरिते देखा है
छोटे छोटे मोती जैसे
मानसरोवर के उन स्वर्णिम
कमलों पर गिरते देखा है !
बादलों को घिरते देखा है
तुंग हिमालय के कन्धों पर
छोटी बड़ी कई झीले हैं
उनके श्यामल नील सलिल में
समतल देशों में आ आकार
पावस की उमस से आकुल
तिक्त - मधुर बिस तंतु खोजते
हंसों को तिरते देखा है
बादल को घिरते देखा है ।

बीच - बीच में टिप्पणी करते आत्मविभोर की अवस्था में बाबा ने कविता पाठ समाप्त की , हम सब कृतकृत्य हुए । यह बहुत लम्बी कविता है , श्रम , सौन्दर्य और लोक संस्कृति से अनुस्यूत ....

सभा भवन से जैसे ही बाबा निकले लोगों ने उन्हें घेर लिया , हर आदमी उनसे कुछ - न - कुछ बतियाना चाहता था , उन्हें पास से छूकर महसूस करना चाहता था , इस आत्मीयता को बाबा भी महसूस कर रहे थे । उन्होंने भाव - विभोर होकर सबका धन्यवाद ज्ञापन करते हुए कहा- " हाँ भई मैं बहुत दूर से आया हुआ हूँ । आप लोगों से शायद पहली बार मिल रहा हूँ । मैं बिहार में जन्मा , लेकिन समूचा देश मेरा अपना है , मेरे यायावरी जीवन में मुझे कभी अहसास नहीं हुआ कि मैं मेरे तरौनी गाँव से दूर हूँ , आप सब मेरे अपने हैं इसलिए मैं अपनी बात बिना लाग - लपेट के कहता हूँ ... निःसंकोच मुझमें आत्मविश्वास है , इसे कोई बुरा नहीं मानता । " भीड़ से घिरे हुए बाबा ने चौतरफा नजरें घुमाईं बोले- " अरे बलदेव कहाँ गया " " बाबा मैं तो पीछे ही खड़ा हूँ । मैं " " अच्छा अब यह बताओ क्या करना है । "

मैंने छूटते हुए कहा - आपको नहीं मालूम , मेरे यहाँ चलना है , बच्चों को आशीष देना है ।

-हाँ हाँ मुझे याद है चलो चलो ।

मैंने देखा सामान्य दिखाई देने वाला यह लघु मानव मेरे देखते - ही - देखते इतना विराट कैसे हो गया ... कोई उन्हें छोड़ना ही नहीं चाहता था ।

आलेख

नलिन खोईवाल

376-ए,सुदामा नगर, इंदौर-452009
मध्यप्रदेश
9425926840

निराशा के घने कुहासे में आशा का उगता दिनकर है , साहित्य

अँधियारे जीवन में आशा और विश्वास का सृजन कर जीवन को जो ख़ुशबुओं से महका दें , वही साहित्य है । गुमराह समाज को जो सही मार्ग पर ले जाकर शरीर की धमनियों में रक्त का संचार प्रवाहित कर दें , सही अर्थों में वो ही अच्छा साहित्य माना जाएगा और जो आदमी को आदमी से बस मुहब्बत करना सिखाएं । साहित्य और समाज दोनों एक - दूसरे के पूरक हैं । बिना समाज के साहित्य की कल्पना करना भी निरर्थक ही है । समाज से ही साहित्य का सृजन होता है , क्योंकि साहित्य का जन्म समाज की कोख से ही होता है । समाज व्यक्तियों का समूह है जबकि साहित्य समाज का आईना है । समाज में जो कुछ भी घटित होता है उसी से तो साहित्य का सृजन होता है । सही मायनों में समाज ही साहित्य की प्रेरणा का उत्तम मार्ग है । किसी अच्छी पुस्तक की कहानी का रास्ता समाज की गलियों से होकर ही तो गुजरता है । शब्दों का बाज़ीगर ही नहीं , शब्दों का जादूगर भी होता है लेखक । लेखक की रौशनाई के पीछे समाज का मस्तिष्क काम करता है । साहित्य की कसौटी उसकी उपयोगिता है । वह साहित्य जो समाज में रचनात्मक , सृजनात्मक , विचारात्मक , सकारात्मक व काव्यात्मक परिवर्तन लाएं , वह साहित्य उपयोगी हैं । जो साहित्य समाज के लिए जितना उपयोगी होगा , वह उतना ही टिकाऊ होगा ।

साहित्य से हमारी भावनाएं , आचार - विचार , अनुभव , संस्मरण,सभ्यता , संस्कृति , संस्कार , धर्म , कर्म , अध्यात्म , दर्शन , रहन - सहन , रीति - रिवाज , वेशभूषा , खान - पान , जीवन-मरण , सब कुछ जुड़ा होता है , तभी तो साहित्य को मानव समाज का मस्तिष्क कहा जाता है । वेद व्यास , वाल्मीकि , तुलसीदास , कालिदास , रसखान , नानक , कबीर , प्रेमचंद , निराला , जायसी , महादेवी वर्मा का साहित्य संपूर्ण समाज की दशा और दिशा दोनों को ही चित्रित करता है । सलमान रशदी व तस्लीमा नसरीन का साहित्य एक क्रांति व एक उन्माद पैदा करने वाला है , जबकि प्रेमचंद , निराला , तुलसी , सुमित्रानंदन , महादेवी का साहित्य समाजवादी विचारधारा का है । ज्ञान - विज्ञान , शांति सुरक्षा , शिक्षा , चिकित्सा , अध्यात्म , प्राकृतिक संपदा से हमारा देश कितना समृद्ध था , यह हम साहित्य के झरोखों से ही जान सकते हैं । साहित्य से ही हमें श्रेष्ठ कर्म करने व अच्छा व नेक इंसान बनने की प्रेरणा मिलती है । तभी तो हम अनेक कठिनाइयों एवं विघ्नों में भी विचलित नहीं होते । जैसा साहित्य होगा , समाज का स्वरूप भी वैसा ही होगा । सामाजिक चरित्र का प्रतिबिंब भी है , साहित्य । साहित्य समाज में शांति भी लाता है और क्रांति का भी शंखनाद करता है ।

साहित्य से समाज का बौद्धिक , आर्थिक , शैक्षणिक , राजनीतिक , विकास भी जुड़ा हुआ है । समाज के विकास का द्वार है सद साहित्य । हमें वैसे साहित्य से बचना चाहिए जो हमें पतन व अवनति के रास्ते पर ले जाता है । क्योंकि बद साहित्य नरक का द्वार है।पुस्तकें हमारी मित्र हैं , जो समय - समय पर हमारा मार्ग प्रशस्त करती रहती हैं । हमें गलत रास्ते जाने से रोकती हैं व हमारा भविष्य भी संवारती हैं । साहित्य , प्रेम , शांति , मैत्री , एकत्व , अनुशासन , अपनत्व , शौर्य , वीरता , अक्षुण्णता , परस्परता , सहनशीलता , कर्मठता , नेक व ईमानदारी का पाठ तो पढ़ाता ही है हममें राष्ट्र भक्ति का जज़्बा भी जगाता है । साहित्य हमें साहस , रोमांच , विविधता के साथ - साथ सतर्कता,धैर्यता और मुस्तैदी भी सिखाता है । वह हमें एक सूत्र में बांधकर सादगी से रहने का सलीका भी सिखाता है । भटकों को वह रास्ता भी बतलाता है , इस नाते वह हमारा पथ प्रदर्शक भी है । साहित्य वह रोशनी है जो अंधेरे से ज्ञान के प्रकाश की ओर हमें ले जाती है व सही मायनों में हमें जीवन जीने की कला सिखाता है , साहित्य ।

साहित्यकार समाज में अपनी अभूतपूर्व विलक्षण कल्पनाओं का मिश्रण कर समाज सुधारक का भी कार्य करता है व समाज में जनजागृति फैलाकर नवाचार की शिक्षा देता है । हीन मानसिकता से दूर रहकर सामाजिक कुरीतियों , बुराइयों , अनुचित मर्यादाओं से लड़ने की शक्ति भी हमें प्रदान करता है । समाज की समुचित मयादाओं को तोड़ना तो धर्म है । प्रेमचंद कहते हैं जिस साहित्य से हमारी सुरुचि न जागे , आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति न मिले , हममें गति और शांति पैदा न हो ,

हमारा सौंदर्य प्रेम जागृत न हो , जो सच्चा संकल्प और कठिनाइयों पर विजय पाने की सच्ची दृढ़ता उत्पन्न न करे , वह साहित्य हमारे लिए बेकार है , वह साहित्य कहलाने का अधिकारी नहीं है।

साहित्य का पतन समाज के पतन का द्योतक है। प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्तियों का संचित प्रतिबिंब होता है। साहित्य और कला से रहित व्यक्ति बिना पूँछ और सींग के पशु समान ही है। सब कुछ मिट सकता है किंतु साहित्य कभी नहीं , साहित्य अजर - अमर है। वह कभी नहीं मरता है , वह दिल के केनवास पर शब्द बनकर सदा जीवित रहता है। साहित्य बच्चों , वृद्धों का मनोरंजन व ज्ञानरंजन तो करता ही है , उन्नति का सिंगार भी है साहित्य। विपत्ति में हमें धीरज बंधाकर हमें विनम्र बनाता है। साहित्य में इतनी ताकत है कि वह तख्तो - ताज तक पलट सकता है और रोतों हुओ को हंसा भी सकता है। सही अर्थों में निराशा के भँवर में आशा का उगता हुआ दिनकर है , साहित्य। और...साहित्य ही समाज में बदलाव भी ला सकता है। वास्तव में साहित्य , समाज का दर्पण है।

अंधकार है वहाँ ,जहाँ आदित्य नहीं है।
मुर्दा है वह देश , जहाँ साहित्य नहीं है।

ग़ज़ल

रामस्वरूप मूंदड़ा

बूंदी-323001 (राज)

1-

तुमको भूल नहीं पाएँगे ऐसी कोई बात नहीं है
अंधियारे में भी गाएँगे चाहे उजली रात नहीं है

निर्मल धारा बहकर नदियाँ चली गई सागर से मिलने
लौटी नहीं समर्पण चाहा उसमें कोई घात नहीं है

कलियाँ खिल, मुस्काई उनने रूप, रंग, रस, गंध बिखेरी
कथ्य- शिल्प- लय- छंद बिना तो कविता का भी गात नहीं है

प्यार जिसे कहती है दुनिया मैं उसको अभिनय कहता हूँ
जी भर नहीं रुला दे आँखें, प्यार कहां, ज़ज्बात नहीं है

आँसू की गरमाई पाकर प्रीत रहा करती चीर यौवन
आँसू ही अमरित होते है इससे बढ़ सौगात नहीं है

2-

तम के घेरे, ये घुटन, संत्रास के सिवा
जिंदगी बाकी बची कहाँ प्यास के सिवा

बाँटते ही जा रहे है, धरती का हर पल
देखने को क्या रहा आकाश के सिवा

एक राजा और उसके रानियाँ अनेक
क्या मिला उनको यहाँ रनिवास के सिवा

दास्ताँ दिल की सुनाई लोग हँस दिए
सब कुछ मिला उसे फ़कत विश्वास के सिवा

लड़ न, लड़ने से कभी मसला सुलझता है
सच बताता कौन है, अहसास के सिवा

संजय ग्रोवर

दिल्ली

1.

किसीको डराना भी अच्छा नहीं है
गो ख़ुद मार खाना भी अच्छा नहीं है

नया कुछ है बेहतर, मगर आज़माओ
कि सारा पुराना भी अच्छा नहीं है

कहीं भीड़ में घुसके पत्थर न मारो
बहुत आना-जाना भी अच्छा नहीं है

नया था कभी वो पुराना ज़माना
पुराना ज़माना भी अच्छा नहीं है

मेरी ऱै रैं पैं पैं भी अच्छी नहीं है
तुम्हारा तराना भी अच्छा नहीं है

तआल्लुक मे गर साफ़गोई नहीं है
तो रिश्ते निभाना भी अच्छा नहीं है

अगर बस रवायत की ख़ातिर करो तो
क़िताबें सजाना भी अच्छा नहीं है

'ये अच्छा नहीं है वो अच्छा नहीं है
मेरा ये बहाना भी अच्छा नहीं है

लेख

छठि मईया आई न दुअरिया : सूर्य उपासना का पर्व है छठ

आकांक्षा यादव

कॉलेज में प्रवक्ता। साहित्य, लेखन और ब्लॉगिंग के क्षेत्र में भी प्रवृत्त। नारी विमर्श, बाल विमर्श और सामाजिक मुद्दों से सम्बंधित विषयों पर प्रमुखता से लेखन। लेखन-विधा- कविता, लेख, लघुकथा एवं बाल कविताएँ। अब तक 4 पुस्तकें प्रकाशित- 'प्रकृति, संस्कृति और स्त्री' (2023), 'आधी आबादी के सरोकार' (2017), 'चाँद पर पानी' (बाल-गीत संग्रह-2012) एवं 'क्रांति-यज्ञ : 1857-1947 की गाथा' (संपादित, 2007)।

देश-विदेश की प्रायः अधिकतर प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं और इंटरनेट पर वेब पत्रिकाओं व ब्लॉग पर रचनाओं का निरंतर प्रकाशन। व्यक्तिगत रूप से 'शब्द-शिखर' और युगल रूप में 'बाल-दुनिया', 'सप्तरंगी प्रेम' व 'उत्सव के रंग' ब्लॉग का संचालन। 60 से अधिक प्रतिष्ठित पुस्तकों/संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाएँ, वार्ता इत्यादि का प्रसारण। व्यक्तित्व-कृतित्व पर डॉ. राष्ट्रबंधु द्वारा सम्पादित 'बाल साहित्य समीक्षा' (नवम्बर 2009, कानपुर) का विशेषांक जारी।

संपर्क: आकांक्षा यादव, पोस्टमास्टर जनरल आवास, बंगला नं.-22. कैंटोनमेंट, शाही बाग, अहमदाबाद (गुजरात)-380004
ई-मेल: akankshay1982@gmail.com

भारतीय संस्कृति में त्यौहार सिर्फ औपचारिक अनुष्ठान मात्रभर नहीं हैं, बल्कि जीवन का एक अभिन्न अंग हैं। त्यौहार जहाँ मानवीय जीवन में उमंग लाते हैं वहीं पर्यावरण संबंधी तमाम मुद्दों के प्रति भी किसी न किसी रूप में जागरूक करते हैं। सूर्य देवता के प्रकाश से सारा विश्व ऊर्जावान है और इनकी पूजा जनमानस को भी क्रियाशील, उर्जावान और जीवंत बनाती है। भारतीय संस्कृति में दीपावली के बाद कार्तिक माह के शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि को मनाया जाने वाला छठ पर्व मूलतः भगवान सूर्य को समर्पित है। माना जाता है कि अमावस्या के छठवें दिन ही अग्नि-सोम का समान भाव से मिलन हुआ तथा सूर्य की सातों प्रमुख किरणें संजीवनी वर्षाने लगी। इसी कारण इस दिन प्रातः आकाश में सूर्य रश्मियों से बनने वाली शक्ति प्रतिमा उपासना के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। वस्तुतः शक्ति उपासना में षष्ठी कात्यायिनी का स्वरूप है जिसकी पूजा नवरात्रि के छठवें दिन होती है। छठ के पावन पर्व पर सौभाग्य, सुख-समृद्धि व पुत्रों की सलामती के लिए प्रत्यक्ष देव भगवान सूर्य नारायण की पूजा की जाती है। आदित्य हृदय स्तोत्र से स्तुति करते हैं, जिसमें बताया गया है कि ये ही भगवान सूर्य, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, स्कन्द, प्रजापति, इन्द्र, कुबेर, काल, यम, चन्द्रमा, वरूण हैं तथा पितर आदि भी ये ही हैं। वैसे भी सूर्य समूचे सौर्यमण्डल के अधिष्ठाता हैं और पृथ्वी पर ऊर्जा व जीवन के स्रोत कहा जाता है कि सूर्य की साधना वाले इस पर्व में लोग अपनी चेतना को जागृत करते हैं और सूर्य से एकाकार होने की अनुभूति प्राप्त कर आनंदित होते है।

छठ पर्व के प्रारंभ के बारे में कई किंवदंतियाँ हैं। मान्यता है कि इस पर्व का उद्भव द्वापर युग में हुआ था। भगवान कृष्ण की सलाह पर सर्वप्रथम कुन्ती ने अपने पुत्र पाण्डवों के लिए छठ पर्व पर व्रत लिया था, ताकि पाण्डवों का वनवास और एक वर्ष का अज्ञातवाश कष्टमुक्त गुजरे। इस मान्यता को इस बात से भी बल मिलता है कि कुन्ती पुत्र कर्ण सूर्य का पुत्र था। इसी प्रकार जब पाण्डव जुए में अपना सब कुछ हार गए और विपत्ति में पड़ गये, तब द्रौपदी ने धौम्य ऋषि की सलाह पर छठ व्रत किया। इस व्रत से द्रौपदी की कामनाएं पूरी हुईं और पाण्डवों को उनका खोया राजपाट वापस मिला गया। ऐसी मान्यता है कि भगवान राम और सीताजी ने भी सूर्य षष्ठी के दिन पुत्ररत्न की प्राप्ति के लिए सूर्य देवता की आराधना की थी, जिसके चलते उन्हें लव-कुश जैसे तेजस्वी पुत्र की प्राप्ति हुई। माँ गायत्री का जन्म भी सूर्य षष्ठी को ही माना जाता है। यही नहीं इसी दिन महर्षि विश्वामित्र के मुख से गायत्री मंत्र निकला था। एक अन्य मत के अनुसार छठ व्रत मूलतः नागकन्याओं से जुड़ा है। इसके अनुसार नागकन्याएं प्रतिवर्ष कश्यप ऋषि के आश्रम में कार्तिक षष्ठी को सूर्य देवता की पूजा करती थीं। संयोगवश एक बार च्यवन ऋषि की पत्नी सुकन्या भी वहाँ पहुँच गई, जिनके पति अक्सर अस्वस्थ

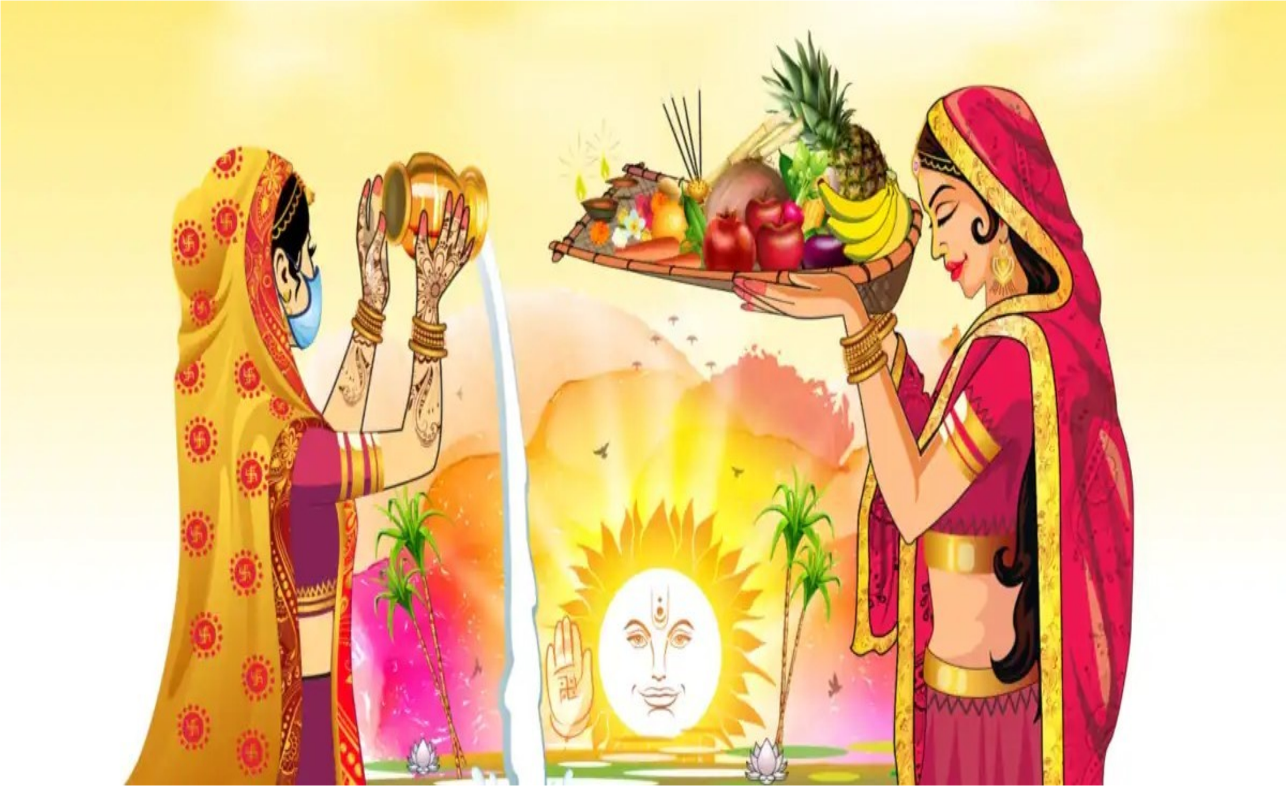

रहते थे। नागकन्याओं की सलाह पर सुकन्या ने छठ व्रत उठाया और इसके चलते च्यवन ऋषि का शरीर स्वस्थ और सुन्दर हो गया।

छठ से जुड़ी एक अन्य प्रचलित मान्यता कर्तिकेय के जन्म से संबंधित है। मान्यता है कि भगवान शिव हिमवान की छोटी कन्या उमा के साथ पाणिग्रहण के उपरान्त रति-क्रीड़ा में मग्न हो गये। क्रीड़ा-विहार में सौ दिव्य वर्ष बीत जाने पर भी कोई संतान उत्पन्न नहीं हुई। इतनी दीर्घावधि के पश्चात भगवान शिव के रूद्र तेज को सहन करेगा, इससे भयभीत होकर सभी देवगण उनकी प्रार्थना करने लगे- हे प्रभु ! आप हम देवों पर कृपा करें और देवी उमा के साथ रति-क्रीड़ा से निवृत्त होकर तप में लीन हां। इस बीच निवृत क्रिया में सर्वोत्तम तेज स्खलित हो गया जिसे अग्नि ने अंगीकार किया। गंगा ने इस रूद्र तेज को हिमालय पर्वत के पार्श्वभाग में स्थापित किया जो कांतिवान बालक के रूप में प्रकट हुआ। इन्द्र, मरूत एवं समस्त देवताओं ने बालक को दूध पिलाने तथा लालन-पालन के लिए छह कृतिकाओं को नियुक्त किया। इन कृतिकाओं के कारण ही यह बालक कर्तिकेय के नाम से प्रसिद्ध हुए। ये छह कृतिकाएं छठी मइया का प्रतीक मानी जाती हैं। तभी से महिलाएं तेजस्वी पुत्र और सुन्दर काया के लिए छठी मइया की पूजा करते हुए व्रत रखती हैं और पुरूष अरोग्यता और समृद्धि के लिए व्रत रखते हैं। बच्चों के जन्म की छठी रात को षष्ठी पूजन का विधान अभी समाज में है।छठ पर्व की लोकप्रियता का अंदाज इसी से लगाया जा सकता है कि यह पूरे चार दिन तक जोश-खरोश के साथ निरंतर चलता है। पर्व के प्रारम्भिक चरण में प्रथम दिन व्रती स्नान कर के सात्विक भोजन ग्रहण करते हैं, जिसे 'नहाय खाय' कहा जाता है। वस्तुतः यह व्रत की तैयारी के लिए शरीर और मन के शुद्धकरण की प्रक्रिया होती है। मान्यता है कि स्वच्छता का ख्याल न रखने से छठी मइया रूष्ठ हो जाती हैं-कोपि-कोपि बोलेंली छठिय मइया, सुना महादेव/मोरा घाटे दुबिया उपरिज गइले, मकड़ी बसेढ़ लेले/हंसि-हंसि बोलेलें महादेव, सुना ए छठिय मइया/हम राउर दुबिया छिलाई देबों। इसी प्रकार घाटो पर वेदियाँ बनाते हुए महिलाएं गाती हैं-एक कवन देव पोखरा खनावेलें, पटिया बन्हावेलें रे/एक कवन देवी छठी के बरत कइलीं, कइसे जल जगाइबि रे/ए घाट मोरे छेके घटवरवा, दुअरे पियदवा लोग रे/एक कोरा मोरा छेक ले गनपति, कइसे जलजगइबि/एक रूपया त देहु घटवरवां, भइया ढेबुआ पियदवा लोग रे। प्रथम दिन सुबह सूर्य को जल देने के बाद ही कुछ खाया जाता है। लौकी की सब्जी, अरवा चावल और चने की दाल पारम्परिक भोजन के रूप में प्रसिद्ध है। दूसरे दिन छोटी छठ (खरना) या लोहण्डा व्रत होता है, जिसमें दिन भर निर्जला व्रत रखकर शाम को खीर रोटी और फल लिया जाता है। खीर नये चावल व नये गुड़ से बनायी जाती है, रोटी में शुद्ध देशी घी लगा होता है। इस दिन नमक का प्रयोग तक वर्जित होता है। व्रती नये वस्त्र धारण कर भोजन को केले के पत्ते पर रखकर पूजा करते हैं और फिर इसे खाकर ही व्रत खोलते हैं।

तीसरा दिन छठ पर्व में सबसे महत्वपूर्ण होता है। संध्या अर्घ्य में भोर का शुक्र तारा दिखने के पहले ही निर्जला व्रत शुरू हो जाता है। दिन भर महिलाएँ घरों में ठेकुआ, पूड़ी और खजूर से पकवान बनाती हैं। इस दौरान

पुरूष घाटों की सजावट आदि में जुटते हैं। सूर्यास्त से दो घंटे पूर्व लोग सपरिवार घाट पर जमा हो जाते हैं। छठ पूजा के पारम्परिक गीत गाए जाते हैं और बच्चे आतिशबाजी छुड़ाते हैं। सूर्यदेव जब अस्ताचल की ओर जाते हैं तो महिलायें आधी कमर तक पानी में खड़े होकर अर्घ्य देती हैं। अर्घ्य देने के लिए सिरकी के सूप या बाँस की डलिया में पकवान, मिठाइयाँ, मौसमी फल, कच्ची हल्दी, सिंघाड़ा, सूथनी, गन्ना, नारियल इत्यादि रखकर सूर्यदेव को अर्पित किया जाता है और मन्नतें माँंगी जाती हैं- बांस की बहंगिया लिये चले बलका बसवां लचकत जाय/तोहरे शरणियां हे मोर बलकवा/हे दीनानाथ मोरे ललवा के द लंबी उमरिया। मन्नत पूरी होने पर कोसी भरना पड़ता है। जिसके लिए महिलाएँ घर आकर 5 अथवा 7 गन्ना खड़ा करके उसके पास 13 दीपक जलाती हैं। निर्जला व्रत जारी रहता है और रात भर घाट पर भजन-कीर्तन चलता है। छठ पर्व के अन्तिम एवं चौथे दिन सूर्योदय अर्घ्य एवं पारण में सूर्योदय के दो घंटे पहले से ही घाटों पर पूजन आरम्भ हो जाता है। सूर्य की प्रथम लालिमा दिखते ही 'केलवा के पात पर उगलन सूरजमल', 'उगी न उदित उगी यही अंगना' एवं 'प्रातः दर्शन दीहिं ये छठी मइया' जैसे भजन गीतों के बीच सूर्यदेव को पुत्र, पति या ब्राह्मण द्वारा व्रती महिलाओं के हाथ से गाय के कच्चे दूध से अर्ध्य दिलाया जाता है और सूर्य देवता की बहन माता छठ को विदाई दी जाती है। माना जाता है कि छठ मईया दो दिन पहले मायके आई थीं, जिन्हें पूजन-अर्चन के बाद 'मोरे अंगना फिर अहिया ये छठी मईया' की भावना के साथ ससुराल भेज दिया जाता है। इसके बाद छठ मईया चैत माह में फिर मायके लौटती हैं। छठ मईया को ससुराल भेजने के बाद सभी लोग एक दूसरे को बधाई देते हैं और प्रसाद लेने के व्रती लोग व्रत का पारण करते हैं। व्रती की सेवा और व्रत की सामग्री का अपना अलग ही महत्व है। किसी गरीब को व्रत की सामग्री उपलब्ध कराने से व्रती के बराबर ही पुण्य मिलता है। इसी प्रकार यदि अपने घर के बगीचे में लगे फल को किसी व्रती को पूजा के लिए दिया जाता है, तो भी पुण्य मिलता है। यहाँ तक की व्रती की डलिया व्रत को वेदी तक पहुँचाकर, उसके कपड़े धुलकर भी पुण्य कमाया जाता है। व्रत रखने वाले घरों में माता की विदाई पर सफाई नहीं की जाती क्योंकि मान्यता है कि बेटी की विदाई या कथा आदि के बाद घरों में झाड़ू नहीं लगाई जाती।

मूलतः बिहार, झारखण्ड और पूर्वी उत्तर प्रदेश के भोजपुरी समाज का पर्व माना जाने वाला छठ अपनी लोकरंजकता और नगरीकरण के साथ गाँवों से शहर और विदेशों में पलायन के चलते न सिर्फ भारत के तमाम प्रान्तों में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है बल्कि मारीशस, नेपाल, त्रिनिडाड, सूरीनाम, दक्षिण अफ्रीका, हालैण्ड, ब्रिटेन, कनाडा और अमेरिका जैसे देशों में भी भारतीय मूल के लोगों द्वारा अपनी छाप छोड़ रहा है- छठि मईया आई न दुअरिया। कहते हैं कि यह पूरी दुनिया में मनाया जाने वाला अकेला ऐसा लोक पर्व है जिसमें उगते सूर्य के साथ डूबते सूर्य की भी विधिवत आराधना की जाती है। यही नहीं इस पर्व में न तो कोई पुरोहिती, न कोई मठ-मंदिर, न कोई अवतारी पुरूष और न ही कोई शास्त्रीय कर्मकाण्ड होता है। आडम्बरों से दूर प्रत्यक्षतः प्रकृति के अवलंब सूर्य देवता को समर्पित एवं पवित्रता, निष्ठा व असीम श्रद्धा को सहेजे छठ पर्व मूलतः महिलाओं का माना जाता है, जिन्हें पारम्परिक शब्दावली में 'परबैतिन' कहा जाता है। पर छठ व्रत स्त्री-पुरूष दोनों ही रख सकते हैं। इस पर्व पर जब सब महिलाएं इकट्ठा होती हैं तो बरबस ही ये गीत गूँज उठते हैं- केलवा जे फरला घवध से, तो ऊपर सुगा मड़राय/तीरवा जो मरबो धनुष से, सुगा गिरे मुरछाय।

भारतीय संस्कृति में समाहित पर्व अन्ततः प्रकृति और मानव के बीच तादाद्म्य स्थापित करते हैं। जब छठ पर्व पर महिलाएँ गाती हैं- कौने कोखी लिहले जनम हे सूरज देव या मांगी ला हम वरदान हे गंगा मईया....... तो प्रकृति से लगाव खुलकर सामने आता है। इस दौरान लोक सहकार और मेल का जो अद्भुत नजारा देखने को मिलता है, वह पर्यावरण संरक्षण जैसे मुद्दों को भी कल्याणकारी भावना के तहत आगे बढ़ाता है। यह अनायास ही नहीं है कि छठ के दौरान बनने वाले प्रसाद हेतु मशीनों का प्रयोग वर्जित है और प्रसाद बनाने हेतु आम की सूखी लकड़ियों को जलावन रूप में प्रयोग किया जाता है, न कि कोयला या गैस का चूल्हा। वस्तुतः छठ पर्व सूर्य की ऊर्जा की महत्ता के साथ-साथ जल और जीवन के संवेदनशील रिश्ते को भी संजोता है।

कुंडलियाँ

वर दे माता शारदे, कर अंतस् उजियार।
हृदयांगन में ज्ञान का, स्वर्ण-दीप दे बार।
स्वर्ण-दीप दे बार,करूँ नित तेरा वंदन।
शब्दांजलि ले मात, करूँ तेरा ही अर्चन।
कह वसंत कर जोड़,छंद से झोली भर दे।
रचूँ प्रीति के गीत,मात कुछ ऐसा वर दे।

*

मतलब के संसार को, नहीं किसी की चाह।
शूल चुभा किस पाँव में, है किसको परवाह।
है किसको परवाह, फूल की चाहत सबको।
स्वार्थ सधे तो मित्र, अन्यथा झटपट खिसको।
कह वसंत कर जोड़, अनोखे जग के करतब।
कहें गधे को बाप, अगर हो उससे मतलब।

वसंत जमशेदपुरी

आलेख

शैलेन्द्र चौहान

34/242, सेक्टर-3, प्रतापनगर, जयपुर-302033
मो. 7727936225
shailendrachauhan@hotmail.com

समृद्ध संस्कृति का प्रतीक - ऐतिहासिक नगर विदिशा

मध्य प्रदेश प्रांत में स्थित एक प्राचीन शहर है विदिशा। यह मालवा के उपजाऊ पठारी क्षेत्र के उत्तर- पूर्व हिस्से में अवस्थित है तथा पश्चिम में मुख्य पठार से जुड़ा हुआ है। ऐतिहासिक व पुरातात्विक दृष्टिकोण से यह क्षेत्र मध्यभारत का सबसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र माना जा सकता है। नगर से दो मील उत्तर में जहाँ इस समय वैसनगर नामक एक छोटा-सा गाँव है, प्राचीन विदिशा बसा हुआ है। यह नगर पहले दो नदियों के संगम पर बसा हुआ था, जो कालांतर में दक्षिण की ओर बढ़ता गया है। यह वेत्रवती नदी के तट पर बसा है, जिसकी पहचान आधुनिक बेतवा नदी के साथ की जाती है। बेतवा की सहायक नदी धसान नदी के नाम में अवशिष्ट है। कुछ विद्वान इसका नामकरण दशार्ण नदी (धसान) के कारण मानते हैं, जो दस छोटी - बड़ी नदियों के समवाय रूप में बहती थी। अनेक संदर्भो के अनुसार यह दशार्ण देश की राजधानी थी। इन प्राचीन नदियों में वेत्रवती उर्फ वेतवा के साथ एक छोटी-सी नदी मिलती है जिसका नाम वैस है, उसका संगम है। इसे विदिशा नदी के रूप में भी जाना जाता है।

इस नगर की भौगोलिक स्थिति अति महत्त्वपूर्ण थी। पाटलिपुत्र से कौशाम्बी होते हुये जो व्यापारिक मार्ग उज्जयिनी (आधुनिक उज्जैन) की ओर जाता था वह विदिशा से होकर ही गुजरता था।

महाभारत, रामायण एवं प्राचीन साहित्य में विदिशा नगर का सबसे पहला उल्लेख महाभारत में आता है। इस नगर के विषय में रामायण में एक परंपरा का वर्णन मिलता है जिसके अनुसार रामचन्द्र ने इसे शत्रुघ्न को सौंप दिया था। शत्रुघ्न के दो पुत्र उत्पन्न हुये जिनमें छोटा सुबाहु नामक था। उन्होंने इसे विदिशा का शासक नियुक्त किया था। थोड़े ही समय में यह नगर अपनी अनुकूल परिस्थितियों के कारण पनप गया। भारतीय आख्यान, कथाओं एवं इतिहास में इसका स्थान निराले तरह का है। इस नगर की नैसर्गिक छटा ने कवियों और लेखकों को प्रेरणा प्रदान की। वहाँ पर कुछ विदेशी भी आये और इसकी विशेषताओं से प्रभावित हुये।

कतिपय बौद्ध ग्रन्थों के वर्णन से लगता है कि इस नगर का सम्बन्ध संभवत: किसी समय अशोक के जीवन के साथ भी रह चुका था। इनके अनुसार इस नगर में देव नामक एक धनीमानी सेठ रहता था जिसकी देवा नामक सुन्दर पुत्री थी। अपने पिता के जीवनकाल में अशोक, उज्जयिनी का राज्यपाल नियुक्त किया गया था। पाटलिपुत्र से इस नगर को जाते समय वह विदिशा में रूक गया थां देवा के रूप एवं गुणों से वह प्रभावित हो उठा और उससे उसने विवाह कर लिया। इस रानी से महेन्द्र नामक आज्ञाकारी पुत्र और संघमित्रा नामक आज्ञाकारिणी पुत्री उत्पन्न हुई। दोनों ही उसके परम भक्त थे और उसे अपने जीवन में बड़े ही सहायक सिद्ध हुये थे। संघमित्रा को बौद्ध ग्रन्थों में विदिशा की महादेवी कहा गया है। इस नगर का वर्णन कालिदास ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ मेघदूत में किया है। प्रवासी यक्ष अपने संदेशवाहक मेघ से

कहता है- अरे मित्र! सुन। जब तू दशार्ण देश पहुँचेगा, तो तुझे ऐसी फुलवारियाँ मिलेंगी, जो फूले हुये केवड़ों के कारण उजली दिखायी देंगी। गाँव के मन्दिर कौओं आदि पक्षियों के घोंसलों से भरे मिलेंगे। वहाँ के जंगल पकी हुई काली जामुनों से लदे मिलेंगे और हंस भी वहाँ कुछ दिनों के लिये आ बसे होगें।

हे मित्र! जब तू इस दशार्ण देश की राजधानी विदिशा में पहुँचेगा, तो तुझे वहाँ विलास की सब सामग्री मिल जायेगी। जब तू वहाँ सुहावनी और मनभावनी नाचती हुई लहरों वाली वेत्रवती (बेतवा) के तट पर गर्जन करके उसका मीठा जल पीयेगा, तब तुझे ऐसा लगेगा कि मानो तू किसी कटीली भौहों वाली कामिनी के ओठों का रस पी रहा है। वहाँ तू पहुँच कर थकावट मिटाने के लिये 'नीच' नाम की पहाड़ी पर उतर जाना। वहाँ पर फूले हुए कदम्ब के वृक्षों को देखकर ऐसा जान पड़ेगा कि मानों तुझसे भेंट करने के कारण उसके रोम-रोम फरफरा उठे हों। उस पहाड़ी की गुफ़ाओं से उन सुगन्धित पदार्थों की गन्ध निकल रही होगी, जिन्हें वहाँ के रसिक वेश्याओं के साथ रति करते समय काम में लाते हैं। इससे तुझे यह भी पता चल जायेगा कि वहाँ के नागरिक कितनी स्वतंत्रता से जवानी का आनन्द लेते हैं।

कालिदास के इस वर्णन से लगता है कि वे इस नगर में रह चुके थे और इस कारण वहाँ के प्रधान स्थानों तथा पुरवासियों के सामाजिक जीवन से परिचित थे। शुंगों के समय में इस नगर का राजनीतिक महत्त्व बढ़ गया। साम्राज्य के पश्चिमी हिस्सों की देख-रेख के लिये वहाँ एक दूसरी राजधानी भी स्थापित की गई। वहाँ शुंग-राजकुमार अग्निमित्र सम्राट के प्रतिनिधि (वाइसराय) के रूप में रहने लगा। यह वही अग्निमित्र है, जो कालिदास के 'मालविकाग्निमित्रम्' नामक नाटक का नायक है। इस ग्रन्थ में उसे वैदिश अर्थात् विदिशा का निवासी कहा गया है। उसका पुत्र वसुमित्र यवनों से लड़ने के लिये सिन्धु नदी के तट पर भेजा गया था। देवी धारिणी, जो अग्निमित्र की प्रधान महिषी थीं उस समय विदिशा में ही थीं। 'मालविकाग्निमित्रम्' में अपने पुत्र की सुरक्षा के लिये उन्हें अत्यन्त व्याकुल दिखाया गया है।

शुंगों के बाद विदिशा में नाग राजा राज्य करने लगे। इस नाग-शाखा का उल्लेख पुराणों में हुआ है। इसी वंश में गणपतिनाग हुआ था, जिसके नाम का उल्लेख समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति में हुआ है। वह बड़ा पराक्रमी लगता है। उसके राज्य में मथुरा का भी नगर सम्मिलित था। वहाँ से उसके सिक्के मिले हैं। कुछ लोगों का अनुमान है कि जब समुद्रगुप्त उत्तरी भारत में दिग्विजय कर रहा था उस समय वहाँ के नव राजाओं ने उसके विरुद्ध एक गुटबन्दी की, जिसका नायक गणपतिनाग था। ऐसा गुट सचमुच बना या नहीं, इस विषय में हम बहुत निश्चित तो नहीं हो सकते। पर इतना स्पष्ट है कि उस समय के राजमंडल में गणपतिनाग का नाम बड़े ही आदर के साथ लिया जाता था।

भरहुत के लेखों से लगता है कि विदिशा के निवासी बड़े ही दानी थे। वहाँ के एक अभिलेख के अनुसार वहाँ का रेवतिमित्र नामक एक नागरिक भरहुत आया हुआ था। उसकी भार्या चंदा देवी ने वहाँ पर एक स्तम्भ का निर्माण किया था। भरहुत के अन्य लेखों में विदिशा के कतिपय उन नागरिकों के नाम मिलते हैं, जिन्होंने या तो किसी स्मारक का निर्माण किया था या वहाँ के मठों के भिक्षुसंघ को किसी तरह का दान दिया था। इनमें भूतरक्षित, आर्यमा नामक महिला तथा वेणिमित्र की भार्या वाशिकी आदि प्रमुख थे।

कला के क्षेत्र में इस नगर का महत्त्व कुछ कम नहीं थां पेरिप्लस नामक विदेशी महानाविक के अनुसार वहाँ हाथी-दाँत की वस्तुएँ उत्तर कोटि की बनती थीं। बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार वहाँ की बनी हुई तेज़ धार की तलवारों की बड़ी माँग थी। इस स्थान सें शुंग-काल का बना हुआ एक गरुड़-स्तम्भ मिला है, जिससे ज्ञात होता है कि वहाँ पर वैष्णव धर्म का विशेष प्रचार था। इस स्तम्भ पर एक लेख मिलता है जिसके अनुसार तक्षशिला से हेलिओडोरस नामक यूनानी विदिशा आया था। वह वैष्णव मतावलम्बी था और इस स्तम्भ का निर्माण उसी ने कराया था। सांस्कृतिक दृष्टि से यह लेख बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। यह इस बात का परिचायक है कि विदेशियों ने भी भारतीय धर्म और संस्कृति को अपना लिया था। विदिशा में इसी तरह और भी भागों से लोग आये होंगे। इस धर्मकेन्द्र में अपने आध्यात्मिक लाभ के लिये लोगों ने स्मारकों का निर्माण किया होगा। विदिशा को स्कन्द पुराण में तीर्थस्थान कहा गया है।

विदिशा-गंज बासौदा सड़क मार्ग पर हेलिओडोरस द्वारा निर्मित विदिशा का गरुड़-स्तम्भ कला का एक अच्छा नमूना है। वह मूलत: अशोक के ही स्तम्भों के आधार पर बना था पर साथ ही उसमें कुछ मौलिक विशेषतायें भी हैं। इसका सबसे निचला भाग आठ कोनों का है। इसी तरह मध्य भाग सोलह कोने का और ऊपरी भाग बत्तीस कोने का है। यह विशेषता हमें अशोक के स्तम्भों में नहीं दिखाई देती। इससे लगता है कि विदिशा के कलाकार निपुण थे और उनकी प्रतिभा मौलिक कोटि की थी

हेलिओडोरस स्तम्भ पूर्वी मालवा के बेसनगर (वर्तमान विदिशा) में स्थित है। इसे लोक भाषा में "खाम बाबा" के रूप में जाना जाता है। एक ही पत्थर को काटकर बनाया गया यह स्तम्भ ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। स्तम्भ पर पाली भाषा में ब्राह्मी लिपि का प्रयोग करते हुए एक अभिलेख मिलता है। यह अभिलेख स्तम्भ इतिहास के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारी देता है। इसे 'गरुड़ ध्वज' या 'गरुड़ स्तम्भ' भी कहा जाता है। नौवें शुंग शासक महाराज भागभद्र के दरबार में तक्षशिला के यवन राजा अंतलिखित की ओर से दूसरी सदी ई. पू. में हेलिओडोरस नाम का एक राजदूत नियुक्त हुआ। इस राजदूत ने वैदिक धर्म की व्यापकता से प्रभावित होकर 'भागवत धर्म' स्वीकार कर लिया था। उसी ने भक्तिभाव से भगवान विष्णु के एक मंदिर का निर्माण करवाया तथा उसके सामने 'गरुड ध्वज' नामक स्तम्भ बनवाया। इस स्तम्भ से प्राप्त अभिलेख इस प्रकार है -

देव देवस वासुदेवस गरुड़ध्वजे अयं
कारिते इष्य हेलियो दरेण भाग
वर्तन दियस पुत्रेण नखसिला केन
योन दूतेन आगतेन महाराज स
अंतलिकितस उपता सकारु रजो
कासी पु (त्र) (भा) ग (भ) द्रस त्रातारस
वसेन (चतु) दसेन राजेन वधमानस।

"देवाधिदेव वासुदेव का यह गरुड़ध्वज (स्तम्भ) तक्षशिला निवासी दिय के पुत्र भागवत हेलिओवर ने बनवाया, जो महाराज अंतिलिकित के यवन राजदूत होकर विदिशा में काशी (माता) पुत्र (प्रजा) पालक भागभद्र के समीप उनके राज्यकाल के चौदहवें वर्ष में आये थे।"

मंदिर के प्रमाण: वर्तमान में इस स्तम्भ के पास निर्मित मंदिर अब नष्ट हो चुका है, लेकिन पुरातात्विक प्रमाण इस बात की पुष्टि करते हैं कि प्राचीन काल में यहाँ एक वृत्तायत मंदिर था, जिसकी नींव 22 सेंटीमीटर चौड़ी तथा 15 से 20 सेंटीमीटर गहरी मिली है। गर्भगृह का क्षेत्रफल 8.13 मीटर है। प्रदक्षिणापथ की चौड़ाई 2.5 मीटर है। इसकी बाहरी दीवार भी वृत्तायत है। पूर्व की ओर स्थित सभामंडप आयताकार है। यहीं से मंदिर का द्वार था। नींव में लकड़ी के खम्भे होने का प्रमाण भी मिला है। पुरातात्विक प्रमाण यह भी बताते हैं कि यहाँ पहले कुल 8 स्तम्भ थे, जिसमें पहले गरुड़, ताड़पत्र और मकर आदि के चिह्न बने हुए थे। इन स्तम्भों में सात स्तम्भ एक ही कतार में मंदिर के पूर्व भाग में, उत्तर-दक्षिण की तरफ़ लगे हुए थे, जो अब नष्ट हो चुके हैं। आठवाँ स्तम्भ ही "हेलिओडोरस स्तम्भ" के रूप में जाना जाता है। यहाँ पहले के मंदिर के भग्नावशेष पर ही दूसरी सदी ई. पू. में नया मंदिर बनाया गया था। यह मंदिर लगभग पहली शताब्दी ईसा पूर्व में बाढ़ में बह गया। इस स्थान पर बना वासुदेव का मंदिर संसार का प्राचीनतम मंदिर माना जाता है। बेसनगर के पूर्व में ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी के स्तूप भी मिले हैं। विद्वान इन बचे हुए स्तूपों को साँची के भी पूर्व का मानते हैं।

वैसनगर के निकट उदयगिरि विदिशा नगरी ही का उपनगर था। उदयगिरि विदिशा से वैसनगर होते हुए पहुँचा जा सकता है। पहाड़ी के पूरब की तरफ पत्थरों को काटकर गुफाएँ बनाई गई हैं। इन गुफाओं में प्रस्तर- मूर्तियों के प्रमाण मिलते हैं, जो भारतीय मूर्तिकला के इतिहास में मील का पत्थर माना जाता है। उत्खनन से प्राप्त ध्वंसावशेष अपनी अलग कहानी कहते हैं। उदयगिरि को पहले नीचैगिरि के नाम से जाना जाता था। कालिदास ने भी इसे इसी नाम से संबोधित किया है। 10वीं शताब्दी में जब विदिशा धार के परमारों के हाथ में आ गया, तो राजा भोज के पौत्र उदयादित्य ने अपने नाम से इस स्थान का नाम उदयगिरि रख दिया। उदयगिरि में कुल 20 गुफाएँ हैं। इनमें से कुछ गुफाएँ 4वीं-5वीं सदी से संबद्ध है। गुफा संख्या 1 तथा 20 को जैन गुफा माना जाता है। गुफाओं की प्रस्तर की कटाई कर छोटे- छोटे कमरों के रुप में बनाया गया है। साथ- ही- साथ मूर्तियाँ भी उत्कीर्ण कर दी गई हैं। उदयगिरि की गुफाओं में बेहद जटिल नक्काशी की गई है और 5वीं शताब्दी में गुप्त साम्राज्य के दौरान चंद्रगुप्त द्वितीय के शासन काल में इन गुफाओं पर फिर से काम किया गया। ये गुफाएं विदिशा से 6 किमी दूर बेतवा और वैस नदी के बीच में स्थित है। एकांत स्थान पर पहाड़ी पर स्थित इन गुफाओं में कई बौद्ध अवशेष भी पाए जाते हैं।

वर्तमान में इन गुफाओं में से अधिकांश मूर्ति- विहीन गुफाएँ रह गई हैं। ऐसा यहाँ पाये जाने वाले स्थानीय पत्थर के कारण हुआ है। पत्थर के नरम होने के कारण खुदाई का काम आसान था, लेकिन साथ- ही- साथ यह मौसमी प्रभावों को झेलने के लिए उपयुक्त नहीं है। एक अन्य गुफा में गुप्त संवत् 425-426 ई. में उत्कीर्ण कुमार गुप्त प्रथम के शासन काल का एक अभिलेख है। इसमें शंकर नामक किसी व्यक्ति द्वारा गुफा के प्रवेश-द्वार पर जैन तीर्थ कर पार्श्वनाथ की मूर्ति के प्रतिष्ठापित किए जाने का उल्लेख है। पहाड़ियों से अन्दर बीस गुफाएँ हैं जो हिंदू और जैन-मूर्तिकारी के लिए प्रख्यात हैं। मूर्तियाँ विभिन्न पौराणिक कथाओं से सम्बद्ध हैं और अधिकांश गुप्तकालीन हैं। यहाँ पाये जाने वाले स्थानीय पत्थर के कारण इन गुफाओं में से अधिकांश गुफाएँ मूर्ति- विहीन गुफाएँ रह गई हैं। खुदाई का काम आसान था क्योंकि यह पत्थर नरम थे, लेकिन साथ-ही-साथ यह मौसमी प्रभावों को झेलने के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

आलेख

दुर्गेश मोहन

बिहटा, पटना (बिहार)

साहित्य के आधार स्तम्भ डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव

भारतीय साहित्य गगन के आभामंडित, सुविख्यात एवं ज्ञान की किरणों को बिखेरती हुई पाठकों के अंतर्द्वंद्व को झकझोरती हुई उसे आनंदित कर चार चांद लगा देने में सक्षम एवं सफल थे-हमारे प्यारे साहित्यकार डॉ0 श्रीरंजन सूरिदेव।

डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव का जन्म28 अक्टूबर ,1926 ईस्वी को शुंभेश्वर नाथ के घर धौनी, दुमका में हुआ था। इनकी शिक्षा एमए त्रय थी। इसके साथ इन्हें पीएच0डी0 की उपाधि से अलंकृत होने का सौभाग्य प्राप्त था। यह साहित्य के क्षेत्र में प्रेरणा अपने ताऊ पंडित रामेश्वर पाठक तथा पंडित नरसिंह मोहन मिश्र से प्राप्त हुई। इनका गृहस्थ जीवन अपनी धर्मपत्नी लता रंजन से पल्लवित पुष्पित हुआ। श्रीरंजन सूरिदेव 26 वर्षों तक बिहार राष्ट्रभाषा परिषद में परिषद पत्रिका के संपादक तथा उपनिदेशक, शोध के पद से सेवानिवृत्त हुए, जो साहित्य जगत हेतु शान की बात है। इनके कार्यों की प्रशंसा संपादन के क्षेत्र में प्राप्त हुआ। उदाहरण_ अन्वेषण, विवेचन ,मूल्यांकन, संवर्धन, प्रचार-प्रसार आदि है। डॉक्टर श्रीरंजन सूरिदेव संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, जैन धर्म, बौद्ध धर्म के अतिरिक्त हिन्दी के क्षेत्र में अहम भूमिका निभाए थे। मूर्धन्य विद्वान एवं साहित्यकार श्रीरंजन जी 'वासुदेव हिंदी: भारतीय जीवन और संस्कृति की बृहत कथा' शीर्षक रूप में पीएच0डी0 की उपाधि प्राप्त किए। यह ग्रंथ प्राचीन साहित्य के वांग्मय मूर्ति स्वरूप ज्ञानमय कोश है। 'मेघदूत : एक अनुचिंतन बारे में श्रीरंजन जी ने प्राचीन काल से आज तक तथा देश _विदेश तक लिखे जाने वाले चीजों को उल्लेखनीय ग्राह्य बनाकर पेश किया है, जो बेमिसाल है। इस ग्रन्थ के बारे में आचार्य नलिन विलोचन शर्मा ने भूमिका लिखी थी। इस ग्रंथ में रंजन जी की प्रकृति चित्रण काफी प्रभावशाली है, वह देखते ही बनती है। जैसे _"प्रकृति के सुकुमार कल्प कवि कालिदास ने मेघदूत के प्रकृति सौंदर्य में मानव को करुण अनुभूतियों का दर्शन किया है तथा मानव की चिरसंचित वेदनाओं का प्रकृति की अनंत छवि के माध्यम से गुम्फन किया है। अभिशप्त _तप्त एवं विरह विताड़ित यक्ष के वेदना संदेश वाहक वलाहक में कवि ने विपुल विश्व की चिरंतन व्यथा का विमल विनियोग कर वलाहक की भूमिका में अमर अश्रु का इतिहास भी लिख दिया है।"

साहित्य मर्मज्ञ रंजन जी के साहित्य का पदार्पण 1945 ईस्वी में हुआ, लेकिन इससे पहले भी आचार्य शिवपूजन सहाय द्वारा संपादित'बालक' मासिक पत्रिका में निबंध 'मंदार पर्वत' नाम से प्रकाशित हो चुका था। ऐसे तो श्रीरंजन जी द्वारा साहित्य ग्रंथों का योगदान बृहत है, लेकिन प्रमुख निम्नलिखित है-वासुदेव हिन्दी भारतीय जीवन और संस्कृति की बृहत कथा, आलोचना ,मेघदूतः एक अनुचिंतन, गीत _संगम , बहुत है काव्य संग्रह, वासुदेव हिंदी, प्राकृत से हिंदी, सिंहासन बत्तीसी संस्कृत से हिन्दी, पाटलिपुत्र की धरोहर रामजी मिश्र मनोहर, अभिनंदन ग्रंथ ,जीवन दर्पण, आचार्य शिवपूजन सहाय की देनंदिनी :डायरी के प्रथम खंड, स्मृति शेष आर्य पुत्र: पंडित राम नारायण शास्त्री, स्मृति ग्रंथ आदि। 'बहुत हैं' 1956-63 की अवधि में रचित सूरिदेव जी की अमर रचनाओं में से एक है। इस ग्रन्थ में 56 गीत संग्रहित हैं।

इसकी भूमिका डॉ. विमल कुमार रचित है। यह किशोर हृदय की रचना होने के कारण सहज समादरणीय है। इसे

हिंदी साहित्य संग्रह के गीतों के क्षेत्र में एक क्रोशशिला की तरह स्वीकार करेगा।विद्वान एवं साहित्यकार श्रीरंजन जी द्वारा रचित 'बहुत है' शीर्षक की ये पंक्तियां कभी काव्य रसिकों को विस्मृत नहीं होगी-

चांद चांदनी के होठों से लेता लोल लहर का चुम्बन,
सौरभ का सागर दे जाता सरिता सांसों को आमंत्रण।
खिलती कलियों से हंसकर जब, मधुकर करता बात बहुत है,
आती उनकी याद बहुत है।
(गीत संख्या एक)।

प्रकांड विद्वान एवं साहित्य वाचस्पति श्रीरंजन सूरिदेव कवि भी थे। ये स्वयं कहते थे-कोई भी कवि हो प्राचीन अथवा नवीन, उसके अंदर एक दर्शन भी होता है, जिसे वह अपनी रचनाओं में देना चाहता है, देता है। डॉ. श्री रंजन द्वारा जिस पत्रिका का संपादन किया जाता था, वह अपने आप में विशिष्ट छाप छोड़ जाता है। जिसमें प्रमुख है-साहित्य, परिषद पत्रिका, अभिनव प्रत्यक्ष, धर्मायण आदि। इन्हें संपादन की कला शिवपूजन सहाय तथा नलिन विलोचन शर्मा से प्राप्त हुई थी।

श्रीरंजन जी ने शिवपूजन सहाय की साहित्यिक सामाजिक उस मान्यता का जिक्र किया था, जिसके अनुसार साहित्य सेवा में शुचिता एवं चरित्र का महत्व सर्वोपरि है। विद्वान एवं साहित्यकार श्रीरंजन जी के पास बिहार तथा बाहर के विद्वानों की पुस्तकों की समीक्षा के निमित्त आती थी। इनके द्वारा रचित 'अक्षर भारती' नामक संस्कृत साधना का अप्रतिम अक्षरोल्लास है। रंजन जी ने बाल रचनाएं लिखकर साहित्य को अमूल्य योगदान दिया। वे बाल कथा लिखकर बच्चों को ज्ञान के साथ मनोरंजन भी देते रहे। जैसे_ पिटारी की रानी, बैताल का बदला, काठ की तलवार आदि।

श्रीरंजन जी जैन धर्म के ज्ञाता थे। एक जगह अपने पत्र में उल्लेख किया है कि मैं दिल्ली में जैन दर्शन से संदर्भित शोध पूर्ण आलेख पढ़ा था। उसकी अध्यक्षता ऑक्सफोर्ड के पंडित प्रोफेसर मतीलाल कर रहे थे। आलेख वाचन के बाद प्रोफेसर मतीलाल ने कहा था-वेरी नाइस। इस वेरी नाइस की व्याख्या करना मानो सूर्य को दीपक दिखाने के समान है। श्रीरंजन जी ने कई स्मारिकाओं का संपादन एवं कतिपय ग्रंथों का संपादन भी किया, जिसका साहित्य जगत सदैव ऋणी रहेगा।

इनकी रचनाएं वैविध्यपूर्ण हैं। ये संपादक ,आलोचक, वक्ता, शोध विद्वानआदि के रूप में सेवा करते रहे। उन्हें कई पुरस्कार एवं उपाधियां मिलने का सौभाग्य प्राप्त था। जिसमें प्रमुख है-भारतवर्षीय दिगंबर जैन महासभा, बिहार शाखा से सम्मानित, बिहार के भूतपूर्व राज्यपाल डॉक्टर अखलाक उर रहमान द्वारा संस्कृत सम्मान, बिहार के भूतपूर्व राज्यपाल सुंदर सिंह भंडारी द्वारा सरस्वती विद्या मंदिर के शिलान्यास समारोह में सम्मान, जैन धर्म हेतु लाइफ टाइम अचीवमेंट अवॉर्ड, रंगमंच संस्था पटना सिटी के निदेशक एवं संस्थापक श्री विश्वनाथ शुक्ल चंचल द्वारा संस्कृति सौरभ सम्मान, भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी द्वारा 30 मई ,2017 को राष्ट्रपति भवन में विवेकानंद पुरस्कार 2015 आदि प्रमुख हैं।

श्रीरंजन सूरिदेव चहुंमुखी प्रतिभा के धनी, साहित्य के आधार स्तंभ, बहुआयामी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, साहित्य के प्रति समर्पण, साहित्य प्रेमियों के हितैषी धार्मिक प्रवृत्ति आदि में निष्ठा रखने वाले साहित्यकार थे।

श्रीरंजन जी का देहावसान 11 नवम्बर, 2018 को पटना में हुआ। यह साहित्य जगत के लिए अपूरणीय क्षति है। श्रीरंजन जी हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी यादें साथ हैं। उन्होंने साहित्य की महती सेवा की थी। इसे हम लोग सदैव स्मरण रखेंगे तथा उनके मार्ग पर चलकर अग्रसर होंगे। वे हम लोगों के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। आपके ऊपर यह शायरी बिल्कुल चरितार्थ होता है-

शाज मालूम हुआ, अस्ल बयानी क्या है,
दिल में वो आग है,
लफ्जों में समा भी न सकूं।

लघुकथा

अश्विनी देशपांडे

खोया हुआ आज

"देखो ना राज, आज माँ सुबह से गांव जाने की रट पकड़ कर बैठी है" स्मिता , राज के आफिस से आते ही जैसे फट पड़ी ।

राज सीधा मां के कमरे में पहुँचा। मां क्लांत चेहरा लिए, पलंग के कोने पर, सूखे पेड़ सी बैठी थी।

राज को देखते ही जैसे बूढ़ी हड्डीयों में जान आ गई। "राज, बेटा मुझे गांव भेज दे ।" माँ ने गिड़गिड़ाते से स्वर में कहा।

"मां परसों ही तुम घर से मंदिर के लिए निकली और रास्ता भूल गई । मुझे आफिस छोड़ कर पूरा दिन तुम्हें ढूंढना पड़ा। पता है ना, तुम अब चीज़े भूल रही हो। तुम्हे अकेले कैसे छोड दूं? राज ने कहा

" मुझे पता है राज। मैं अपना आज तो खो ही रही हूँ और जो बीते हुए कल की , मेरे गांव की, मीठी, सुनहरी यादें है उन्हे बस एक बार जी लेना चाहती हूं "।

राज निःशब्द सा रह गया।

व्यंग्य

डॉ. मुकेश 'असीमित'
गंगापुर सिटी, राजस्थान
अस्थि एवं जोड़ रोग विशेषज्ञ

चलो बुलावा आया है

चलो बुलावा आया है, दिल्ली ने बुलाया है। इनकी निगाहें दिल्ली पर टिकी हुई हैं। क्या नेता, क्या लेखक, क्या कलाकार—सबकी नजरें दिल्ली की ओर लगी रहती हैं। जैसे गली-गली में आवारा घूम रहा आशिक, जो बस दिल्ली के एक इशारे भर की देर में अपना बोरिया-बिस्तर समेटकर दिल्ली को कूच कर दे। कोई रैली के लिए, कोई धरना-प्रदर्शन के लिए, कोई टिकट के लिए, कोई पुरस्कार के लिए—सबके लिए बस एक ही मंजिल...एक ही सहारा...हारे का सहारा... "चलो दिल्ली।" दिल्ली एक मंजिल है, एक आकर्षण है, एक मानक है, एक वॉशिंग मशीन भी, जहां हर प्रकार के दाग धुल जाते हैं।

राजनेताओं की तो एक टांग अपने क्षेत्र में है, तो दूसरी दिल्ली में। कुछ ऐसे हैं, जिनका बुलावा नहीं आता, फिर भी हर दूसरे दिन दिल्ली जा पहुँचते हैं। शायद बुलाने वाले भूल गए हों। दिल्ली का बुलावा भी अनोखा असर डालता है। नींद उड़ जाती है जब दिल्ली से बुलावा आता है—चाहे उनके पास पहले से कुर्सी हो या जिन्हें कुर्सी लेनी हो। एक को डर के मारे नींद नहीं आती, तो दूसरे को खुशी के मारे। सब अपनी आँख, नाक, कान दिल्ली की ओर लगाए रखते हैं। दिल्ली तो जादूगर है, जो नेताओं की सारी इंद्रियों को वश में रखती है।

कोई गंगा में डुबकी लगाकर अपने पापों का प्रायश्चित करता है, इधर दिल्ली की यमुना नदी न जाने कितने ही दिल्लीजीवियों के पापों को धो-धोकर प्रदूषित होती जा रही है।

दिल्ली बादल है—आशाओं और आकांक्षाओं का उमड़-घुमड़ कर घूमता बादल। बरसने पर आए तो छप्पर फाड़कर बरसे। न जाने कितने ही चाँद इन बादलों में अपने आपको ढंके हुए हैं। उनके क्षेत्र की जनता इंतजार कर रही है कि बादल छँटे और इन्हें इनके चाँद का दीदार हो, जनता की विरह दूर हो। जनता शरमाई-संकोचाई सी, भूखी-प्यासी, घूँघट ओढ़े बैठी है...चाँद का दीदार हो तो अपना व्रत खोले। पर ये दिल्ली के बादल हैं जी..! किस करवट बैठें, कह नहीं सकते।

जैसे मियाँ की दौड़ मस्जिद तक, वैसे ही नेता की दौड़ दिल्ली तक। हमारे क्षेत्र का तो मौसम भी दिल्ली का उधार लिया हुआ मौसम है। दिल्ली में चली ठंडी हवा तो यहाँ पड़े कड़ाके की ठंड। दिल्ली का पारा चढ़े तो यहाँ पड़ी भीषण गर्मी। दिल्ली को जुकाम हो तो यहाँ सीधा 100 डिग्री बुखार। दिल्ली की एक छींक पर तो सेंसेक्स की साँसें भी धराशायी हो जाएँ। दिल्ली परमात्मा है, वहाँ से निकली आत्माएँ पंचतत्व रूपी नेता के शरीर को धारण करती हैं। नेताजी की आत्मा तो पहले ही दिल्ली में कैद रहती है...बस चुनाव के बाद शरीर भी दिल्ली में पंचतत्व में विलीन हो जाता है...तो फिर पाँच साल तक विलीन ही रहता है।

फिर आते हैं चुनाव-सारे नेताओं की आत्माएँ दिल्ली से रिलीज़ होना शुरू होती हैं। ऊँचे भावों में उठते हैं टेंडर...बिकी हुई आत्माएँ...नए-नए शरीर धारण करती हैं, चोला बदलती हैं, दल बदलती हैं। भटकती हुई आत्माएँ ढूँढती रहती हैं अपना निवास...मंत्रालय, आयोग, समितियों की कुर्सियों के आसपास। रह जाती है तो जनता—रोते-बिलखते परिजनों की तरह विलाप करती हुई।

राजनीति जीवन चक्र है—जो आया है, वो जाएगा। कल फिर कोई आएगा। कब आपके हसीन सपनों को चुराकर दिल्ली भाग जाएगा, कह नहीं सकते। वो कहते हैं, *"दिल्ली हमारे बाप की,"* कहते रहो जी! आखिर में दिल्ली सबको साबित कर देती है कि वो क्या है... **सबकी बाप है वो!** बस, यह राजनैतिक रंगमंच है। सारी कठपुतलियाँ अपना खेल दिखा रही हैं। सबकी डोर दिल्ली के हाथ में है। **दिल्ली...खेल दिखाने वाला कलाकार है, जो अपने हाथ की कलाबाज़ियाँ दिखा रहा है।** खींच लेता है डोरी कभी भी। किस-किस कठपुतली को खेल में

लगाना है, कौन कहाँ किसकी टाँग खींचेगा, गाली-गलौज, पटेबाजी, पटखनी का खेल... ये सब दिल्ली ही तय करती है। खेल के बीच में कब कठपुतलियाँ बदल जाएँ, यह सब अनिश्चित है। कठपुतलियाँ कब अपना चेहरा बदल लें, कुछ कहा नहीं जा सकता। खेल चलता रहता है, पर्दा गिरता नहीं, बस कलाकार बदल जाते हैं।

कोई भी नेता जब पालने में पल रहा होता है, तभी उसके पग पहचाने जा सकते हैं। **देखो न, कैसे उसके पग दिल्ली की दिशा में कुलबुला रहे हैं।** समझ लो, नेता बनने की तैयारी शुरू है। दिल्ली हो आयें ,अपने फाटे कुरते पर भी पेबंद लग जाए । **दिल खोलकर ढिंढोरा पिटवा देंगे जी ।** जैसे समाज में विदेश से लौटे व्यक्ति को विशेष तवज्जो मिलती है, वैसे ही नेता समुदाय में "दिल्ली-रिटर्न" की धाक जमती है। *"दिल्ली-रिटर्न"* का टैग लगते ही बाज़ार भाव बढ़ जाता है। माल शोरूम में दिखाने लायक हो जाता है।

दिल्ली-रिटर्न वाली पूँछ लगवा ली है तो अब मजाल है कि कोई मक्खी नाक पर बैठ जाए! पूँछ है, मक्खियाँ भगाने के लिए।

दिल्ली जाकर लोग अपने हिस्से की जितनी भी दिल्ली समेट सकते हैं, समेट लाते हैं। दिल्ली उनकी आत्मा में रच-बस जाती है। दिल्ली की धौंस दिखाकर न जाने कितने काम, जो सीधी उंगली से संभव नहीं, *"दिल्ली की आँख"* दिखाकर करवाए जाते हैं।

दिल्ली-रिटर्न भी दो प्रकार के होते हैं—**एक वो, जिन्हें दिल्ली बुलाती है; और दूसरे वो, जो बिना बुलाए जाते हैं, लेकिन प्रचार ऐसे करते हैं मानो दिल्ली ने विशेष तौर पर बुलाया हो।** चुनाव के मौसम में तो समझो दिल्ली इन दिल्लीजीवियों से ठसाठस भर जाती है। बस किसी तरह दिल्ली पहुँच जाएँ और टिकट मिल जाए—चाहे ब्लैक में ही क्यों न लेना पड़े।

जुगाड़, प्रपंच, दल-बल, खेमा, साम-दाम-दंड-भेद... बस एक ही आशा, एक ही ख्वाहिश—इस बार दिल्ली हमें बुला ले।

चंदूमल जी दिल्ली होकर आए हैं। सारे शागिर्द उनकी मिजाज़पुरसी में लगे हैं, लेकिन उनका मिजाज़ उखड़ा हुआ है। शायद दिल्ली के भाग का छींका इनके आँगन में नहीं टूटा। बहुत साधने की कोशिश की, पर एक धुर-विरोधी, जो कभी दिल्ली जाने वाली कार में इनके पीछे बैठता था, अब खुद अपनी कार लेकर दिल्ली चला गया। कब निकल गया, इन्हें भनक तक नहीं लगी।

चंदुमल टाक रहे हैं अपनी कुर्सी को एकटक,...कुर्सी हिल सी रही है । आशंकाओं से दिल डूबने सा लग रहा है।

"क्या हुआ? क्यों याद किया? अब पार्टी पर आरोप लगे हैं, मुझे क्यों बलि का बकरा बनाया जा रहा है? बताओ... मुझसे इस्तीफा तो नहीं माँग लेंगे?"

ढेरों आशंकाएँ!

वाह रे दिल्ली और दिल्ली-रिटर्न वालों, धन्य हो!

मोनिका तोमर

लघुकथा

सतह के परे

शाम का वक्त था। आकाश में घने काले बादल छाए थे। मंद मंद बहती ठंडी हवा ने मौसम को और भी सुहावना बना दिया था।इस छोटे से कस्बे में मेरा ट्रांसफर हुआ था। दो तीन दिन सामान व्यवस्थित करने में ही लग गए। नई जगह और छोटे से कस्बे की सोचकर मन वैसे ही कुंठित था। सोचा कि चलो थोड़ा टहल लिया जाए। बाहर आया तो ठंडी हवा के झोंके के स्पर्श से जैसे सारी थकान मिट गई। पुरानी जगह और ऑफिस के साथियों के बारे में सोचते हुएमैं अपनी ही धुन में मस्त था की तभी किसी बच्चे के रोने की आवाज सुनकर चौंक गया। इधर उधर देखा तो थोड़ी ही दूरी पर पाँच-छः साल की एक लड़की अपनी गोद में चार-पांच महीने के बच्चे को लिए खड़ी थी। मैंने अनुमान लगाया, शायद उसका भाई होगा।बच्चा रो इसलिए रहा था क्योंकि वह उस बच्ची के हाथों से फिसलता जा रहा था। साथ ही वह बच्ची भी रो रही थी क्योंकि वह अपने भाई को संभालने में असमर्थ थी। बिना एक सेकण्ड भी देरी किए भागकर मैंने उस लड़की की गोद से उसके भाई को ले लिया। एक पल की भी देर हो जाती तो बच्चा जमीन पर गिर जाता और शायद गंभीरचोट लग जाती।

"क्या हुआ नीलू, सब ठीक तो है?"घर के अंदर से आवाज आई।

मेरा मन क्षुब्ध हो उठा। कैसी माँ है, जो इतनी तेज रोने की आवाज सुनकर भी बाहर नहीं आई । हद होती है लापरवाही की। मां होकर भी बच्चों की जिम्मेदारी ठीक से नहीं निभा पा रही।

यही सब सोचते हुए मैं बच्चे को गोद में लेकर घर के अंदर गया। बच्चे की माँ चारपाई पर लेटी हुई थी। पास ही बैसाखियां रखी थी।

मुझे अपनी ही सोच पर लज्जा एवं घृणा महसूस हुई। बच्चे को उसकी मां के पास लिटाकर मैं तुरंत घर से बाहर आ गया। कभी-कभी हम दूसरे की परिस्थितियों को समझे बिना जल्दबाजी में उनके बारे में निर्णय ले लेते हैं।

monikatomar2020@gmail.com

व्यंग्य

डॉ० दलजीत कौर
#2571,सेक्टर-40 सी
चंडीगढ़ (160036)
9463743144

कुत्ते सातों उत्ते (कुत्ते हमसे ऊपर)

देश में आजकल कुत्तों की वजह से बहुत बवाल मचा है ।लोग इतना प्यार अपनों से नहीं करते जितना कुत्तों से करते हैं ।लोग बच्चा पैदा करने की अपेक्षा कुत्ता पालना पसंद करने लगे हैं ।कई जगह पत्नी ने पति को कमरे से बाहर कर दिया है और कुत्ते को कमरे में रख लिया है ।यही हाल पतियों का भी है ।इंसान को इंसान से ज़्यादा कुत्ते पर भरोसा है ।कुत्ता सदा से वफ़ादारी का प्रतीक रहा है ।कुत्तों का निश्छल प्रेम आज भी देखने को मिलता है जबकि मनुष्य में यह गुण ख़त्म हो गया है ।

कुत्तों की एक प्रवृत्ति काटना भी है ।वह सदियों से काटता आया है ।कुत्ते के काटे हुए लोग समाज में बहुत हैं ।पिछले कुछ समय से कुत्ते थोड़ा ज़्यादा काटने लगे हैं ।आए दिन शहरों में कुत्ते किसी न किसी को काट लेते हैं और ज़रा सा नहीं इतना काट लेते हैं कि लोग मर रहे हैं ।छोटे -छोटे कितने बच्चों को इन्होंने मार डाला ।दिल्ली में दो साल में कुत्तों के काटने की घटनाएँ 277% बढ़ी हैं। 2022 में कुत्तों के काटने के 6700 मामले दर्ज किए गए और 2024में यह आँकड़े बढ़ कर 25000 हो गए ।हर राज्य की यही स्थिति है ।उनकी दहशत से तंग आकर लोगों ने सरकार से गुहार लगाई कि शहरों को कुत्तों से मुक्त किया जाए ।सरकार ने आदेश दिया कि कुत्तों को पकड़कर डॉग शेल्टर में डाला जाए ।आदेश आते ही कुत्तों के प्रेमी सड़कों पर उतर आए ।हाथों में बड़े -बड़े सलोगन पकड़े - "यह आवारा नहीं /हमारा है ।"अब दूसरे लोग कह रहे हैं कि भई तुम्हारा है तो घर ले जाओ ।घर भी नहीं ले जाना क्योंकि इतनी ज़िम्मेवारी कौन उठाए ।कइयों का कुत्ता प्रेम तो सिर्फ़ इसलिए है कि उन्हें पंडित जी ने दशा देखकर बताया है कि कुत्ते को दूध डालना है ।घी -शक्कर के साथ रोटी डालनी है ।जिनके अपनों की जान गई है वे कुत्तों को देखना नहीं चाहते ।समाज में दो दल बन गए ।कुत्तों के समर्थक व असमर्थक ।कुत्ते मुंडी घुमा -घुमा कर देख रहे हैं - लोग उनके बारे में क्या निर्णय ले रहे हैं ।

हमारा एक कोर्ट केस चल रहा है ।आठ साल हो गए ।इंसानों के मुक़दमे सालों-साल चलते हैं ।हमारे यहाँ न्याय की रफ़्तार ज़रा धीमी है। कुत्ते अपना केस दस दिन में जीत गए ।लोगों ने लड्डू बाँटे और सरकार से कहा -कुत्तों को नहीं भ्रष्टाचार को हटाओ ।सुप्रीम कोर्ट ने फ़ैसला सुनाया -पकड़े गए कुत्तों को नसबंदी करके छोड़ दिया जाएगा और ख़तरनाक कुत्तों को क़ैद में रखा जाएगा ।

अब एक कुत्तों के मंत्री ने पूछा है -कैसे तय होगा कि कुत्ता कितना ख़तरनाक है ।शायद कोई थर्मामीटर बनाया जाए ।अभी इस पैमाने पर कोई फ़ैसला नहीं आया ।कुत्तों को पकड़ने से रोकने वाले व्यक्ति पर पच्चीस हज़ार और संस्था पर दो लाख का जुर्माना लगाया जाएगा । आदेश से बहुत हलचल हो रही है ।लोगों को इंसान से ज़्यादा कुत्तों की फ़िक्र है ।कितना दयावान है मेरा देश ।सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि शहर के हर वार्ड में कुत्तों को भोजन डालने का स्थान निश्चित किया जाएगा ।कोई भी संस्था या व्यक्ति किसी भी परिस्थिति में सड़क पर कुत्तों को ख़ाना नहीं डालेगा ।आदेश का उल्लंघन करने वालों के ख़िलाफ़ क़ानूनी कार्यवाही होगी ।कई लोगों पर जुर्माना लगा भी ।कुत्ते खुश हैं कि उनके लिए लोग कुत्तों की तरह लड़ रहे हैं ।अख़बार की सुर्ख़ियों में उनका नाम है ।मैंने कुत्तों के सरदार से पूछा -आजकल बहुत छाए हुए हो ।कवियों की तरह हर अख़बार में तुम्हारी फोटो है ।चर्चा है ।

उसने ख़ुद पर गर्व करते हुए कहा -हर कुत्ते का वक्त आता है ।हमारा वक़्त कई साल बाद आया है ।
मैंने हैरत से पूछा -पहले भी था ?

अब उसकी आवाज़ में घमंड आ गया था ।वह बोला -फ़क़ीर बुल्ले शाह का नाम सुना है ?पंजाबी के साहित्य में वे हमें तुमसे ऊपर लिखकर गए हैं ।वह ज़ोर -ज़ोर से गाने लगा - राती जागन करन इबादत /राती जागन कुत्ते /कुत्ते सातो उत्ते ।

आलेख

कादंबरी मेहरा
लंदन
kadamehra@googlemail.com

लोहड़ी

आज से पचास या साठ वर्ष पहले उत्तर पूर्व के राज्यों में लोहड़ी के त्यौहार को कोई कोई जानता था। परन्तु अब पंजाब की ओर से अनेक रिवाज़ अन्य प्रांतों की जीवन शैली में घुल मिल गए हैं। इसका मुख्य कारण सिख समुदाय का परिवहन के क्षेत्र में योगदान है। भारत ही नहीं विश्व भर में सिख भाई टैक्सी और ट्रक चलाते हैं। यह मेहनत और धर्म के बाद किसी अन्य सिद्धांत को मानते हैं। जी तोड़ काम करने के बाद यह समुदाय छक कर मस्ती भी करता है। इनकी मस्ती इनके संगीत और नृत्य में दिखाई देती है जो अब भारत भर में सबसे अधिक लोकप्रिय है। यही नहीं विश्व में भारत का प्रतिनिधित्व करता है।

यूं तो सभी पंजाबी लोग लोहड़ी का त्यौहार मनाते हैं मगर इसको पूरे भारत की लोक संस्कृति का अंग बनाने का श्रेय सड़क के शेरों अर्थात सरदारों को जाता है।

भारत अनादि काल से सूर्यपूजक देश रहा है। ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म के पहले विश्व के सभी धर्म सूर्य पूजक थे। इनमे रोम और मिस्त्र बड़ी शक्तियां थीं। फारस में अग्नि उनका प्रमुख देवता था जापान में भी प्राकृतिक शक्तियों को पूजा जाता था। मगर भारत में सूर्य मंडल न केवल पूजित था ,इसका गहन अध्ययन भी यहीं किया गया। ज्यामिति और ज्योतिष का महीन ज्ञान पांच से सात हज़ार वर्ष पहले भारत में विद्यमान था।

सूर्य की दिशा के संग उपज का जो सम्बन्ध है वह भारतीयों को ज्ञात था। अतः हमारे सभी प्रमुख त्यौहार उपज और फसल से निर्देशित हैं। २२ दिसंबर को पृथ्वी पर सूर्य का सबसे छोटा दिन होता है। इसके बाद सूर्य उत्तरायण की ओर अग्रसर होता है। जनवरी की १४ तारीख को सूर्य मकर राशि में प्रवेश करता है। इसको मकर संक्रांति कहते हैं. राशियां १२ होती हैं। जब भी सूर्य एक राशि से दूसरी में प्रवेश करता है , एक नयी संक्रांति होती है। संक्रांतियां १२ होती हैं। हिन्दू धर्म के अनेक मतों में त्योहारों की गणना संक्रांतियों से होती है।

२२ दिसंबर से दिन की लम्बाई बढ़ने लगती है। उसके बाद पहली संक्रांति १४ जनवरी को आती है। यह हमारे वर्ष का विशेष दिन तय है। कुम्भ का स्नान इसी दिन होता है। नदियों के किनारे मेले लगते हैं। पूरे भारत में पूजा दान आदि शुभ कार्य किये जाते हैं। ' तिल ' संभवतः भारत में सबसे पहले उगाया गया था। तिल शब्द से बना है ' तेल '.
' तेल ' विश्व को भारत ने दिया। यह समय रबी की फसल की कटाई का समय होता है।

तिल की नई फसल काटी जाती है। कहावत है ," पुराने तिलों में तेल नहीं होता " . अतः खलिहान में जितना पुराना तिल बचा होता था उसे झटपट इस्तेमाल करके नई फसल के लिए जगह बनाई जाती थी। इसलिए मकर संक्रांति पर तिल का दान किया जाता है। पूरे भारत में तिल के व्यंजन बनाये जाते हैं। जैसे तिलकुट (महाराष्ट्र) , तिलबुग्गा (पंजाब) , गजक (उत्तर भारत) , लड्डू (गुजरात) आदि आदि। रेवड़ी संभवतः विश्व की पहली चूसने वाली मिठाई है।

पंजाब प्रान्त में सर्दी औसत से अधिक पड़ती है। अतः संक्रांति की पूर्व संध्या को कसबे का प्रमुख ,या ज़मींदार ,या सेठ ,अपने गाँव खेत आदि में अपनी प्रजा ,यानि किसानो को एकत्र करके एक अग्नि यज्ञ का आयोजन करता है। दो या तीन हफ्ते पहले से छोटे बच्चे टोलियां बनाकर घर घर लोहड़ी माँगने जाते हैं। यह लोग छंद (टप्पे) और गीत गाते हैं जो कभी कभी स्वरचित भी होते हैं। लोहड़ी के लिए गृहस्थ इनको लकड़ी और मिठाई गुड़ ,चूरी (रोटी को कूट कर घी और शक्कर मिला कर बनाई मिठाई),पैसे आदि देते हैं। बच्चे इनको आपस में बांटकर खाते हैं। मना करने पर कहते हैं
हुक्का भई हुक्का
ऐ घर भुक्खा।

लोहड़ी का सबसे पुराना गीत है :--

सुन्दर मुंदरिये , हो
तेरा कौन विचारा , हो
दुल्ला भट्टीवाला , हो
दुल्ले धी वियाही , हो
सेर शक्कर पाई , हो
कुड़ी दा लाल पटाका ,हो
कुड़ी दा सालू फाटा ,हो
सालू कौन समेटे , हो
चाचा गाली देस्से ,हो
चाचा चूरी कुट्टी ,हो
ज़मींदारां लुट्टी ,हो
ज़मीन्दार सुधाये ,हो
बेम बेम भोले आये ,हो
इक्क भोला रै गया ,
सिपाई फड़ के लै गया.
सिपाई ने मारी इंट
पाँवे रो ते पाँवे पिट्ट
साञ्नु दे दे लोहड़ी
ते जीवे तेरी जोड़ी।

नई लकड़ी फूस आदि एकत्र करके उसकी पूजा की जाती है। सुहागिने इस अलाव का नारियल, नए बांस , चुन्नी आदि से सिंगार करती हैं। बीच में गोबर की सांझी बनाकर रखी जाती है।सांझी संध्या देवी का स्वरूप है जिसकी सुहागिने पूजा करती हैं। सभी गृहस्थ अपनी अपनी थाली सजा कर पूजा करते हैं। थाली में पत्तों वाली मूली , गन्ने की गँडेरियाँ , तिल , मूंगफली , पकवान
रेवड़ी ,खजूर , चिड़वा ,मकई के फुल्ले , बताशे या अन्य मिठाई आदि होती है। दिन ढल जाने पर मुखिया अलाव जलाता है। एकत्रित महिलाएं व पुरुष गीत ,दोहे ,बोलियां गाते हैं और भंगड़ा डालते हैं। नव दम्पति और नवजात शिशु की पहली लोहड़ी धूमधाम से मनाई जाती है।

फसल की समृद्धि से जुड़ा यह त्यौहार केवल भगवान् की कृपा का कीर्तन नहीं है। इसमें बसी है एक वीर की याद जिसने मुग़ल सम्राट को आँख दिखाई थी और इंसानियत की अनहोनी मिसाल कायम की थी। आज तक पूरा पंजाब उसे याद करता है। उपरोक्त कविता पर ध्यान दीजिये। दुल्ला भट्टीवाला का जिक्र आता है।
कौन था यह दुल्ला भट्टीवाला। क्यों सारा पंजाब उसके गुन गाता है आजतक ?

आज इस युग में यह कहानी विशेष महत्त्व रखती है। कहते हैं इतिहास अपने को दुहराता है। आज भारत में जिन हालातों पर हम आंसू बहा रहे हैं वैसे ही हालातों ने आज से पाँच सौ वर्ष पूर्व इस महान वीर को जन्म दिया था। लोहड़ी उसी की याद में मनाया जानेवाला एक ऐतिहासिक त्यौहार है । मगर इसमें यू के के " गाए फॉक्स " या रावण जैसे नाकारों को नहीं बल्कि एक वीर ,सदाचारी, धरतीपुत्र भारतीय को याद किया जाता है।

इस वीर का नाम अब्दुल्ला भट्टी था। भट्टी उसकी ज़मींदारी का नाम था। यह एक ज़मींदार परिवार में सोलहवीं शताब्दी के मध्य में पैदा हुआ था। इसके पिता का नाम फरीद और माँ का नाम लाड़ी था। इसके दादा का नाम बिजली संदल था। यह लोग रावलपिंडी के पास रहते थे। आस पास के गाँवों में इनकी धाक थी। अकबर बादशाह ने इस काल में पंजाब में अपने पाँव गड़ा दिए और बारह वर्ष के लिए लाहौर को अपनी राजधानी बना लिया। उसने इस काल में अफगानिस्तान और पेशावर पर चढ़ाई की। अपनी साम्राज्यवादी नीति के चलते उसको धन की बहुत जरूरत पडी। उसने एक मोटा राजस्व किसानो पर लाद दिया और उसके कारिंदे जबरदस्ती किसानो को लूटने लगे। दरअसल मुग़ल सम्राट सेना के सिपाहियों को राजकोष से तन्खा नहीं देता था। उनको बस अधिकार दे देता था कि जिसे चाहे लूट लो। वह अपनी हद से अधिक मनमानियां करते थे। किसानो की आर्थिक स्थिति पर बुरा असर पड़ा।

बिजली संदल और फरीद ने इसका जम कर विरोध किया। वह अपनी खुद की फ़ौज रखते थे और उनको मुग़ल सेना से लोहा लेने भेज देते थे। कई बार मुग़ल सेना हार गयी। मगर एक मौलवी की गद्दारी के

कारण मुग़ल सेनापति ने उनको ज़हरीला पेय पिलाकर नशे की हालत में बंदी बना लिया और लाहौर लाकर किले के सामने सूली पर लटकवा दिया। उनके शरीरों को दफ़नाया नहीं गयाबल्कि भूसा भरवा कर किले की दीवार पर टांग दिया गया। ताकि बागियों में दहशत बनी रहे।
इनके मरने के चार महीने बाद लाड़ी ने अब्दुल्ला को जन्म दिया। सुनकर अकबर के कान खड़े हुए। उसने युक्ति से लाड़ी को अपने वश में किया। उसी दिन अकबर के बेटे शेखू (बाद में जहांगीर) का भी जन्म हुआ था। अकबर ने कहा कि शेखू को किसी राजपूतनी का दूध पिलाया जाए ताकि बच्चा वीर बलवान बने। अतः उसने लाड़ी को बुला भेजा। सद्यः प्रसूता लाड़ी अपने पति और ससुर को गवां बैठी थी। नवजात शिशु की रक्षा भी उसे करनी थी अतः वह , मरता क्या न करता , राजी हो गयी। उसने दोनों बच्चों को दूध पिलाया। दोनों बच्चे अभिन्न मित्र थे। अब्दुल्ला शैतान और खिलंदड़ा था। सिपाही अगर किसानों को तंग करते थे तो वह गुलेल से मारकर उनको सज़ा देता था। कई बार उसे अकबर के सामने पकड़ ले जाया गया मगर शेखू हर बार उसको बचा लेता। अकबर ने उसको मदरसे पढ़ने भेजा मगर उसका ध्यान शरारतों में लगा रहा। .अक्सर गुलेल से वह चिड़ियाँ मारता। ज़रा बड़े होने पर उसने गुजरियों की मटकी फोड़ने में महारत हासिल की। कहते हैं एक दिन एक स्त्री ने उसे फटकार बताई और कहा नालायक तू अपने बाप और दादा के नाम को डूबा रहा है। वह दूर दूर तक अपनी शराफत और न्यायप्रियता के लिए मशहूर थे। उनकी लाशें किले पर तंगी तेरा इंतज़ार कर रही हैं। अब्दुल्ला ने अपनी माँ से पूछा। तब लाड़ी ने पहली बार उसे बताया कि वह कौन था और उसके पिता और दादा का क्या
उद्देश्य था जीवन में। लाड़ी ने उसको सात कमरे दिखाए जिनमे हथियार बंद थे।

बस तभी से अब्दुल्ला बागी बन गया। वह अमीरों को लूटकर किसानो की मदद करने लगा। । उसने ५०० वीर नौजवान एकत्र किये और उनको शस्त्रविद्या सिखाई। अकबर के एक सौदागर अली को मारकर उसने ५०० घोड़े अपने कब्जे में कर लिए जो वह कंधार से लाया था। अकबर की एक बीबी मक्का मदीना जा रही थी हज करने। अब्दुल्ला ने उसको लूटकर सारा धन किसानो में बाँट दिया। वह लोहारों और बढ़इयों को अधिक पूजता था। यह लोग उसे हथियार बना कर देते थे। इसी तरह मेधा खत्री एक सौदागर था। वह बुखारा से माल लेकर आया था। अब्दुल्ला ने उसे लूटकर अनेक लड़कियों की शादी करवाई। लड़कियों की तस्करी रोकने के लिए बाह जान हथेली पर रखकर घूमता था। अनेकों को उसने छुड़वाया और फिर उनकी शादिया करवाईं अकबर हार गया मगर उसे पकड़ नहीं पाया। कहते हैं अब्दुल्ला लाहौर गया तो तुलसी राम नामक एक हिन्दू ने शिकायत की कि कई कसाई गाय काटते थे। उसको बहुत बुरा लगा। उसने उनको मौत के घाट उतार दिया। उसने एक रात में २४ कसाई मार डाले। अभी भी अनेक राजपूत और आराई मुसलमान गाय नहीं खाते।

एक बार एक हिन्दू किसान की दो बेहद सुन्दर लड़कियों की सगाई हुई। उनके नाम थे सुंदरी और मुंदरी। सगाई तो हो गयी मगर उनके ससुराल वाले गौना कराने नहीं आये। उनको अकबर के कारिंदों का डर था। यह लोग सुन्दर स्त्रियों को जबरदस्ती अगवा करके अकबर बादशाह को खुश करते थे। या उनको काबुल और कंधार के सौदागरों के हाथ बेच देते थे। लड़कियों के पिता ने अब्दुल्ला को पुकारा। अब्दुल्ला ने इस कारज का खुद बीड़ा उठाया। उसने घने जंगल में एक बड़ा अलाव जलाया और पंडित को बुलवाकर सुंदरी और मुंदरी के फेरे डलवाये। उसने खुद कन्यादान किया और दहेज़ में एक एक सेर शक्कर दी।

लोहड़ी के गीत के बोल इस घटना के साक्षी हैं।

कुड़ी डा लाल पटाका , (दुल्हन का लाल जोड़ा था)
कुड़ी डा सालू फाटा , (उसकी चुन्नी फटी हुई थी)
सालू कौन समेटे , (चुन्नी की लाज कौन रखे)
मामा गाली दस्से ,(मामा दुष्टों को कोस रहा था)
भर भर चूरियाँ वंडे (जब दुल्ले ने शादी करवा दी तो मामा ने चूरी बाँटी)

तभी गांववाले आ गये और उन सबने उत्सव में भाग लिया। चारों तरफ ख़ुशी छा गयी। लोहड़ी का त्यौहार इसी वीर बहादुर स्त्रियों के संरक्षक ,अब्दुल्ला की वीरगाथा है। हमें इससे सीख लेनी चाहिये और इस गाथा का प्रचार करना चाहिए। खासकर आज के युवकों को जो स्त्रियों को बेइज़्ज़त करके अपनी वीरता सिद्ध करना चाहते हैं।

अनेक ऐतिहासिक घटनाएं इस वीर से जुडी हैं। जहांगीर इसपर मुग्ध था। कहते हैं अब्दुल्ला ने एक बार शिकार पर एक हमलावर शेर को मार गिराया और जहांगीर की जान बचा ली। खुश होकर जहांगीर ने उसे पच्चीस घोड़े इनाम में दिया। अब्दुल्ला मुसलमान था मगर अपनी प्रजा में सबको बराबर सम्मान देता था। उसने गुरु अर्जुन देव जी के साथ मिलकर बड़ी दोआब क्षेत्र में किसानो के कर माफ़ करवाए थे। मगर उसका हिन्दू प्रेम मौलवियों को नहीं सुहाता था। एक मौलवी ने उसे धोखे से पकड़वा दिया। अकबर ने अब्दुल्ला को भी उसके बाप और दादा की तरह सूली पर लटकवा दिया। मगर मरते मरते भी उसके मुख से निकला

" पंजाब का कोई भी इज़्ज़तदार किसान अपनी ज़मीन की मिटटी नहीं बेचेगा। "

कहानी

श्यामल बिहारी महतो

ग्राम- मुंगो,पोस्ट- गुंजरडीह
थाना- नावाडीह,जिला- बोकारो, झारखंड
पिन कोड-829132

संस्कारी पुड़िया

शाम होते होते सगरो गाँव में ढिंढोरा सा पिट गया- " गोपला ने गणेशवा की बहू को ले भागा...! "
" सुना तुमने,भौजी देवरवा के साथ भाग गयी...! "
जिसने सुना, वही दोनों को गरियाते नज़र आये-
" छि : छि : कैसन युग आ गया, बोडो- छोटो की कोई ख्याल नाय..! " औरतों को खुराक मिल गया।
" आज के लौंडा- छौंडा से इससे बेहतर उम्मीद नहीं कर सकते हो..!" बूढ़े कुढ़ने लगे।
" न रिश्तों की प्रवाह है न लाज लिहाज..!" हर किसी का मुंह बजने लगा था।

खिसियायी सुशीला देवी कपार पर हाथ धरे आंगन में बैठी अपनी तकदीर को कोसने लगी-" भतार भी ढंग का नहीं मिला, बेटा भी उसी के रंग निकला..! "
सुशीला देवीगाँव के आदर्श आंगनबाड़ी केन्द्र में बच्चों कोआदर्श की पाठ पढाती थी। गाँव में लोग उसे मास्टरनी कहा करते हैं थे। भारी भरकम शरीर की मालकिन सुशीला देवी को फाड़ देने से पैंतीस पैंतीस की दो औरतें निकल आती। उसी को उसके छोटे बेटे ने उसके जीवन का जैसे दो फाड़ कर दिया था । उसके बाद गाँव में जो दुर्गन्ध फैली ! वो गूह मुंह होने जैसा था।

सुशीला देवी बहुत ही संस्कारी महिला थी। प्यार दुलार के साथ उसकी माँ ने बचपन में ही उसे संस्कार की जन्मघुटी पीला दी थी। लेकिन वही जन्मघुटी सुशीला देवी अपने दोनों बेटों को पिलाने में नाकाम रही थी । अगर पिला पाती तो जीवन का ऐसा कचरापन उसे देखना नहीं पड़ता ।

घर में क्या हो रहा है, गाँव में क्या हो रहा है,कौन क्या कर रहा है, उसके पति भालचंद महतो का उससे कोई मतलब नहीं था। और न पत्नी से कोई मतलब था न उसके प्यार से कोई वास्ता था । न बेटों के भविष्य को लेकर उसके दिमाग में कोई योजना थी। न उन दोनों की पढ़ाई से भी उसका कोई सरोकार, कोई लेना देना था। उनकी अनुपस्थिति में दोनों बेटे जैसे तैसे बढ़ रहे थे और पढ़ रहे थे। और वह गोमिया प्रखण्ड में एक सरकारी कर्मचारी के रूप में पैसे बटोर रहा था, कहें तो पैसे पीट रहा था। एक बार महीने में घर आने की बात कहने पर पत्नी को एड़े मुक्के मार कर बुरी तरह घायल कर दिया था। उसके गुप्तांग को सूजा देख डॉक्टर मीरा जैन ने गुस्से में कहा था " वह आदमी है कि कोई दरिंदा ! पत्नी को इतनी बेरहमी से कोई पीटता है क्या..? "

उस दिन के बाद सुशीला देवी ने पति के साथ कोई समझौता नहीं की और अपनी जिंदगी अपने ढंग जीने का फैसला कर लिया। आंगनबाड़ी उसके जीवन का केंद्र बन गया।

यधपि अब तक जिये जिन्दगी में सुशीला देवी कभी सकून के दो पल नहीं जी पाई थी। वो समझ नहीं पा रही थी कि उसके जीवन में इतना उठा पटक क्यों है? बड़ा बेटा गणेश आंख चिपता हुआ पैदा हुआ था। वह हमेशा आंख चिपता रहता। शरीर बाप सा काला और चूल भालू सा। शक्ल से भी और अक्ल से भी बाप जैसा। पैदा भी हुआ था विचित्र स्वभाव का। बचपन में तो प्रायः सभी बच्चे घिसिर घिसिर कर चलते हैं। लेकिन गणेश पेट के बल पर चलता था। जहाँ बैठता उसी दिशा में लंबे समय तक टकटकी लगाये देखता रहता था। बोलता कम और खाता ज्यादा। गोबर गणेश जैसा। ठीक उसके विपरीत सुशीला देवी का छोटा बेटा गोपाल पैदा हुआ था। पर यह भी शक्ल से बाप पर गया था। लेकिन अक्ल उसने बाप से तेज़ पाया था। बचपन में ही औरतों की साडियां खींचना जैसेपेट से ही सीख कर आया था। जब वह सात आठ साल का था तभी उसने एक दिन साड़ी खींच कर माँ को ही नंगी कर दिया था। माँ को लगा था बेटा शरारत कर रहा है, लेकिन जब पूरी तरह नंगी हो गई, तो बेटे को जोर का थप्पड़ मार दी " बाप जैसा बनेगा क्या तू भी ?"

सुशीला देवी पति भालचंद् को भी कहां समझ पाई थी। जब घर आता। पूरा जानवर बना हुआ होता। आते ही सुशीला देवी पर अय्यास की तरह टूट पड़ता। न दिन देखता न रात। न घर देखता और न आंगन। पत्नी की शरीर को नोचना शुरू कर देता। बड़े हो रहे बच्चों तक नज़र अंदाज कर दिया जाता था। एक दिनभालचंद ने घर में कदम रखते ही आंगन में बाल संवार रही सुशीला देवी को पीछे से दबोच लिया और आगा पीछा देखे बगैर सर्रर.से साड़ी खीच कर पत्नी को नंगा कर दिया और उसी तरह उठा कर सीधे अंदर विस्तर पर ले गया था। यह सब गोपाल ने अपनी चंचल आंखों से भरा पुरा रूप में देखा । तब वह आंगन के एक कोने में बैठा लुडू खेल रहा था ।

वही गोपाल बचपन से ही औरतों के साथ लुकाछिपी खेलना शुरू कर दिया था। नहाती हुई औरतों को दीवार के पीछे से छिपकर देखना, लघु शंका कर रही को टकटकी लगाये देखना, गोपाल ने पैदा होते ही जैसे सीख लिया था। पर सुशीला देवी को यह बच्चों का बचकाना से ज्यादा कुछ नहीं लगता । " बच्चे बचपन में ऐसी शरारतें करते ही हैं !" किसी के उल्हाने की जवाब में वह कहा करती थी।
उधर गोपाल जैसे जैसे बड़ा होता गया, उनकी हरकतों के पांव भी बड़े होते चले गये थे ।

अब उसे जब मौका मिलता, औरतों की जमात में घुस जाता और उनकी बातों को बड़ा गौर से सुनता। कभी कभी औरतें उसे डांट कर भगा देती " चल भाग यहाँ से, हमारी बात क्या सुनता है, जनीमेहरा (चुपके चुपके औरतों की बात सुनने वाला) कहीं के..!" वह उठ कर थोड़ी दूर जाता, फिर लौट आ चुपके से किसी के पीछे चिपक जाता। उसे देख मुझे अपने बचपन के दोस्त दौलत की याद रही थी। " पक्का जनीमेहरा है ! " औरतों ने उसे उपाधि दे रखी थी। वह भी अक्सर औरतों की भीड़ में पाया जाता था। अब इस दुनिया में नहीं रहा ।

इधर गणेश सोलह साल की उम्र में भी वैसा का वैसा ही था। शरीर से बड़ा हो गया था। लेकिन हुलकने का भाव- अंदाज वही था,बचपन वाला ! बोर्ड परीक्षा में गांधी डिवीजन से उसने पास किया था- इसी साल । पर घर में किसी ने उसे बधाई तक नहीं दी। माँ ने कहीं से आधा किलो लड्डू लाकर दी और कहा " बांट दो अपने दोस्तों के बीच, ताकि सबको पता चल जाएं कि तू पास कर गया है..! "

उसने वही किया। परन्तु यहाँ भी किसी दोस्त ने उसे बधाई नहीं दी थी। उसने बुरा नहीं माना। बाद में बकरीयों को लेकर जंगल की ओर निकल पड़ा था। बकरियाँ चराना उसका रोज का काम था।

दो साल बाद सुशीला देवी के दूसरे बेटे गोपाल ने बोर्ड परीक्षा लिखी । बाप के डिवीजन मार्क से पास किया। बाप भालचंद सेकेंड होल्डर था। इस रिजल्ट के बाद गोपाल का एक और रिजल्ट सामने आया - लड़की अगवा करने का !

बिमला कुमारी पडोस गाँव की थी। नावाडीह हाई स्कूल में नवमी की छात्रा थी। हर दिन पैदल स्कूल आती जाती थी । सुनसान तेतरिया मोड़ में एक दिन गोपाल ने उसे उठा लिया। सोचा था यह भी मान जायेगी, जैसे पहले के दो लडकियां मोबाइल रिचार्ज के पैसे लेकर मान गयी थीं। लेकिन बिमला नहीं मानी, उसने बवाल मचा दी। पडोसी गाँव में खूब हल्ला मचा। लडकों ने गोपाल को खूब दौडाया। दस बजे रात वह पकड़ में आया। दोनों गाँव के बीच चबूतरा पर पंचायत बैठी। गोपाल का बाप भालू की तरह पंचायत में आकर खड़ा हो गया। जहाँ गोपाल की माँ सुशीला देवी ने पंचायत में अपनी बात रखी -" मैं लड़की को अपने घर की बहू बनाने को तैयार हूँ..!"

लड़की के बाप ने एतराज़ किया। कहा -" मेरी लड़की अभी नाबालिग है, और फिर इस म्लेछ से! कौन अपनी बेटी का ब्याह दे। इसे पुलिस के हवाले कर देना चाहिए ताकि फिर यह गंदी हरकत न करे..! "

इसके बाद बड़ी देर तक पंचायत शोर गुल में डूबा रहा। उसी बीच मुखिया ने हस्तक्षेप करते हुए कहा " हम किसी के भविष्य को बर्बाद करना नहीं चाहते है, इसकी पहली गलती समझ माफ़ किया जा सकता है। लेकिन फिर दूबारा ऐसा हुआ तो सीधे पुलिस के हवाले कर दिया जायेगा..। "

सुशीला देवी को समझ में आ चुका था। छोटा बेटा बुरी तरह बिगड़ चुका है। उसे सुधारना उसके बस की बात नहीं है। तभी उसका ध्यान बड़े बेटे गणेश की ओर गया। वह इक्कीस साल का हो चुका था। एक दिन उसने गणेश से कहा " मैं तुम्हारी शादी कर देना चाहती हूँ..! "
गणेश बहुत कम बोलता था। तब भी उसने कम ही बोला-" कर दो, तुम्हारे कामों में मदद कर देगी..! "

पर गणेश की शादी, सुशीला देवी के जीवन में बड़ा ही बुरा और गुड़ गोबर करने वाला साबित हुआ ! " मास्टरनी, मरते दम तक इसे भूला नहीं पायेगी.।" ऐसा लोगों का मानना था। और इसका कारण बना कौन, वही कपूत बेटा गोपाल !

आषाढ़ माधे गणेश की शादी पडोसी गाँव के दिनबंधु महतो की बेटी सुमित्रा कुमारी के साथ समाजिक रीतिरिवाज से कर दी गई। इस शादी से सुमित्रा खुश नहीं थी। उसे गणेश पसंद नहीं था।

" बिना तिलक दहेज के आज कल कौन लड़का शादी करता है..? बोलो ! " माँ बाप ने समझाया
इस तरह माँ बाप के दबाव के आगे उसे झूकना पडा था। सुमित्रा थोड़ी चंचल स्वभाव की तो थी ही, आजाद ख्याल की भी थी। चटर पटर खाने और अच्छे कपड़े पहनने का शौक़ भी रखती थी। लेकिन अभाव ने उसके हाथ पैर बांध रखे थे। शादी होते ही उनकी दबी अकाक्षांओं ने जोर मारना शुरू कर दिया था। हर दिन पति के सामने नयी नयी फरमाइश करने लगी। गणेश कुछ ला देता, कुछ नहीं ला पाता। सुमित्रा उल्हाना देने लगती " कैसन मरद हो, आपन पत्नी की इच्छा पूरी नहीं कर पाते हो..? " और रूठ जाती थी। गणेश उसको उसी हाल में छोड़ बकरियों को लिए जंगल की ओर निकल जाता। तब यही गोपाल भाभी की बाकी इच्छाओं को लाकर पूरी कर देता और कहता " लाकर तो दे रहा हूँ। पर देवर हूँ, पति मत समझ लेना..! "
" लाकर दे तो रहे हो, पर भाभी हूँ, पत्नी मत समझ लेना..! " सुमित्रा हंस कर जवाब देती।

इस तरह की बातें उस घर की दीवारों से हर दिन टकराने लगी थीं। जो सुमित्रा इस शादी से नाराज थी। वही गोपाल का सान्निध्य पाकर सूर्यमुखी लगने लगी थी। वक्त दबे पाँव आगे बढता रहा। देवर भाभी की युगल जोड़ी से घर का कोना कोना खिलखिलाने लगा। सुमित्रा भूल चुकी थी कि गोपाल उसका मरद नहीं बल्कि देवर है। हर वक़्त

उसी के बारे सोचती रहती थी। सुशीला देवी को अच्छा भी लगता और नहीं भी लगता " देवर भाभी में इतना सब कुछ तो होता है..!" वह सोचती थी।

सुमित्रा करम परब में नैहर गयी थी। दस दिन रही। सुशीला देवी ने गणेश को उसे लाने भेजा। सुमित्रा ने आने से मना कर दी। गणेश लौट आया। उल्टे सुमित्रा ने गोपाल को अपने पास बुला ली। गोपाल पंद्रह दिन सुमित्रा के साथ रहा। सोलहवें दिन गोपाल के साथ ससुराल चली आई । परन्तु रात को वह गणेश के कमरे में जाने की बजाय गोपाल के कमरे में घुस गयी और अंदर से हुडकी (कुण्डी) लगा दी। सुबह सुशीला देवी ने उसे बहुत खरी खोटी सुनाई " तुम्हारा मरद गोपाल नहीं गणेश है, यह लछन ठीक नहीं है, लोग सुनेंगे तो थूकेंगे तुम पर। मरद बदनाम नहीं होता, औरतें बदनाम होती हैं..! " और वह अपने आंगनबाड़ी चली गई।

शाम को सुशीला देवी लौटी तो, घर में न सुमित्रा मिली और न गोपाल मिला। आंगन में गणेश माटी की मूरत की भांति एक कोने में लुटे-पिटे हालत में बैठा हुआ था। उसकी सुदामा हालत देख सुशीला देवी को उस पर बड़ा क्रोध आया। आगे बढकर उसने उसकी गाल पर एक जोरदार चांटा जड़ दी। कहा -" तुम्हारी औरत किसी दूसरे मरद के साथ भाग गयी और तुम यहाँ माटी का माधवबना बैठा है। उसकी हाथ पैर नहीं तोड़ सका..!"

उधर गोपाल का फोन लगातार "स्वीच आफ" आ रहा था ।

सुशीला देवी आंगन में ही बडबडाते हुए चक्कर काटने लगी " वाह रे बेटा ! बाप काजन्मघुटी तुमने भीपी ली..! "

सुभाष सेमल्टी

देहरादून,उत्तराखंड

देख अहिंसक को हिंसक बन

देख अहिंसक को हिंसक बन,मानवता शरमाती है
हे प्रभु इस धरती पर नर को,दानवता क्यों भाती है ।

मानव करनी ने ही सारा, घोर नाश तो ढाया है।
मानव ही मानव का वैरी, घमंड की यह माया है।
दौलत को ही समझ कसौटी, मनुजता डगमगाती है ।
हे प्रभु इस धरती पर नर को,दानवता क्यों भाती है ।।

अभिमति छाने पर मानव ने, निज परिवेश जलाया है।
अपने मतलब के खातिर ही, रिश्तों को झुठलाया है।
उसको प्रीत आधुनिकता की, प्रतिदिन ही बहकाती है।
हे प्रभु इस धरती पर नर को,दानवता क्यों भाती है ।।

झूठ दिखावा सबको प्यारा, नहीं रहा सच से नाता।
भूल गया मानवता का पथ, हिंसा का पथ है भाता।
नीति कुनीति हो चली अब तो, हिंसा सब को आती है।
हे प्रभु इस धरती पर नर को,दानवता क्यों भाती है ।।

गले लगाते जिस से हित हो, छद्म प्रेम का होता है।
स्वार्थ पूर्ति पर ही जीता वो, स्वार्थ सदा ही बोता है।
धन दौलत के पीछे भागा, यही उसे भरमाती है।
हे प्रभु इस धरती पर नर को,दानवता क्यों भाती है।।

देख अहिंसक को हिंसक बन,मानवता शरमाती है।
हे प्रभु इस धरती पर नर को,दानवता क्यों भाती है ।।

रवींद्र कुमार शर्मा

जिला बिलासपुर हि प्र

थकी हुई सी जिंदगी

बहुत मुश्किल से मिली है यह ज़िन्दगी
कैसे जियें इसको यह है अपने हाथ
दुखी रहा वो जो और की चाह करता रहा
सुखी वही रहा जो उसी में खुश रहा जो था उसके पास

ऐसे भी ज़िन्दगी में देखे कई बेचारे
थक हार कर जो बैठ गए किनारे
कामयाबी ने चूमे उनके कदम
बढ़ते रहे जो आगे बिना किसी सहारे

सुख दुख जीवन में है बहता पानी
कभी दुख कभी सुख यही तो है जिंदगानी
उलझते रहोगे तो उलझाती रहेगी
पड़ेगी उम्र फिर मुश्किल में बितानी

राह बहुत कठिन है नहीं देगा कोई साथ
छुड़ाने वाले बहुत मिलेंगे थामेगा नहीं कोई हाथ
अपनी अपनी पड़ी है सबको यहां
कोई नहीं समझेगा दूसरों के जज़्बात

कहानी

राजेन्द्र परदेसी

लखनऊ (उ. प्र.)

आधुनिकता की आँधी

बालकृष्ण की नौकरी के पैंतीस वर्ष परिवार के सदस्यों को अपने पैरों पर खड़ा करने लायक बनाने में ही लग गये। जिस वेतन पर वह सेवानिवृत हुए, उतने पर उनके बेटे शेखर ने नौकरी शुरू की थी। अब वह एक नामी बहुराष्ट्रीय कम्पनी में अस्सी हज़ार पा रहा था। परन्तु बालकृष्ण तो अपने लिए शहर में एक कमरा भी नहीं बना पाये।

नौकरी से रिटायर होने के बाद बालकृष्ण ने सोचा कि किराये के मकान में कब तक शहर में पड़े रहेंगे, अच्छा होगा कि गांव लौट चला जाये। वहाँ सिर छुपाने के लिए पुश्तैनी मकान तो है ही, परन्तु उनकी पत्नी सरोज का मन शहर छोड़कर गांव लौटने का नहीं था। इसीलिए अपने मन की बात और बालकृष्ण की योजना के बारे में गुप्त सूचना बेटे शेखर तक पहुँचा दी थी। शेखर की अभी शादी नहीं हुयी थी। अकेला रह रहा था। उसका मन था कि माँ उसी के साथ दिल्ली आकर रहे।

प्रतिदिन की तरह बालकृष्ण सुबह टहलकर वापस घर आये तो सरोज ने उन्हें बताया कि शेखर ने दिल्ली में एक फ्लैट ले लिया है। परसों हम लोगों को लेने आ रहा है। अपनी राय भी व्यक्त की। आखिर, किराये के मकान को छोड़ना ही है।

बालकृष्ण ने अधिक कुछ न कहकर केवल इतना ही कहा-'जैसी तुम लोगों की मर्जी।'

शेखर के साथ बालकृष्ण और उनकी पत्नी सरोज किराये का मकान खाली कर दिल्ली के नये फ्लैट में शिफ्ट हो गये। किरायेदारी की पीड़ा से ग्रस्त बालकृष्ण को अपने बेटे के फ्लैट में आना सुखद लगा। खुश होकर पूछा-'शेखर ! यह फ्लैट तुमने कितने में लिया, यह तो काफी अच्छा है।'

शेखर कुछ कहता, इसके पहले ही उसकी माँ बोल पड़ी-'जिन्दगी भर नौकरी की पर एक कमरा भी न बना पाये। बेटे ने तो पांच साल की ही नौकरी में इतना अच्छा फ्लैट रहने को दिया तो कहते हो, इतना महंगा लेने की क्या जरूरत थी?' सरोज ने अपने मन में दबी कुंठा को भी व्यक्त कर दिया-'नौकरी करने के बाद भी जीवन भर पैसों का ही रोना रोते रहे। मेरा कोई भी शौक पूरा न कर सके... अब बेटे को भी वैसे ही जीने की सलाह दे रहे हो?'

'मेरा तो बस यही आशय था कि इससे सस्ता फ्लैट लेता तो हाथ में भी कुछ पैसा बचा रहता' बालकृष्ण ने सफाई दी 'तो पत्नी बिना कुछ बोले वहाँ से चली गयी। वह भी चुप होकर बैठ गये।

अब माँ-बेटा दोनों स्वतंत्र निर्णय लेने लगे। दोनों अपनी इच्छानुसार आधुनिक साज-सज्जा के सामानों को फ्लैट में एकत्र करते जा रहे थे। नया फ्लैट किसी सेवानिवृत तृतीय श्रेणी के कर्मचारी का नहीं बल्कि बहुराष्ट्रीय कम्पनी के एक इक्जीक्यूटिव का आवास लगने लगा।

फ्लैट तो इक्जीक्यूटिव का लग रहा था, पर बालकृष्ण तो अभी भी अपनी पुरानी चाल ढाल में ढले नज़र आ रहे थे। माँ-बेटे ने आपस में सलाह की और उनके लिए एक जोड़ी नया पैजामा खरीदकर आ गया। बेटे ने इशारे में माँ को समझाया। माँ उसे लेकर पति के पास गयी और बोल-'यह पैजामा लीजिये, धोती की जगह इसे पहना कीजिये अब। सोसाइटी में आप कुर्ता-धोती पहनकर घूमते हैं, अच्छा नहीं लगता।'

बालकृष्ण झिड़कियाँ खाते रहे पर अपने को बदल नहीं पाये। इसका मलाल उनकी पत्नी और बेटे को सदा सालता रहता।

माँ के आने से बेटे का फ्लैट सुसज्जित हो गया तो शेखर की लड़कियाँ दोस्त जो पहले होटलों में मिला करते, अब उसी फ्लैट में आने-जाने लगे। बालकृष्ण को यह सब अमर्यादित लगता। अपनी भावना पत्नी को व्यकत करते तो वह बेटे को समझाने के बजाय उन्हें ही दकियानूसी बताती और समय के साथ चलने वाला बुर्जुवा समझते हुए झिड़क देती-'आपको यह सब ठीक नहीं लगता तो चुपचाप जाकर अपने कमरे में बैठकर अखबार पढ़िये।'

माँ अपने बेटे के रंग में पूरी तरह रंग चुकी थी। उसके लिए बेटे के लड़के उसकी दोस्त लड़कियाँ में कोई फर्क नज़र नहीं आता था। शेखर की ये लड़कियाँ दोस्त उसके साथ घर आती, सीधे उसके कमरे में चली जातीं, दरवाजा बंद होता और ऊँची आवाज में म्यूजिक बजने लगता।

बालकृष्ण अखबार को बार-बार नीचे करके बेटे के कमरे के दरवाजे की ओर देखते रहते पर माँ के लिए यह सब ध्यान देने योग्य बात नहीं थी। उसके विचार से यह तो कैवल उम्र का तकाजा भर है।

एक दिन बालकृष्ण ने मन बनाया कि वह शेखर से कहें कि अपने लड़कियाँ मित्रों में से जिन्हें अपने ज्यादा

नज़दीक पाता है। उसे बताये, उनसे उसकी शादी कर दे। इस तरह से तो रहना-घूमना अच्छा नहीं लगता।
बालकृष्ण अपनी बात शेखर से कह भी नहीं पाये थे कि स्वयं शेखर ने आकर अपनी माँ से कहा- 'माँ! मैंने अपने साथ काम करने वाली लड़की शशि से शादी करने का फैसला किया है। उसे भी साठ हजार महीना मिलता है।
'ठीक तो है', माँ की आँखों में साठ हजार घूम गये। उसने तुरन्त जाकर बालकृष्ण को बताया। पति लड़की की जाति-धर्म की जानकारी प्राप्त करने को उत्सुक हुए तो शेखर से यह सब जानकारी मिलती कुछ समयोपरान्त कि इसके पहले ही वह कोर्ट में शादी करके बहू को लेकर घर आ गया।

बालकृष्ण ने फिर वही पुरानी परम्परा की बात उठायी तो शेखर बोला-'रीति-रिवाज़ के चक्कर में पड़ता तो बेकार में हम दोनों को हफ्तों छुट्टी लेनी पड़ती और दिखावे में ही व्यर्थ खर्चा करना पड़ता। वैसे भी शादी में गांव से तो कोई अपना पैसा खर्च करके इतनी दूर दिल्ली आता भी नहीं और रही बात दिल्ली की तो यहाँ अपना कोई है नहीं जिसे आप निमंत्रण देते।'
'सही तो कह रहा है शेखर' बेटे की ओर से पैरवी करने के लिए माँ खड़ी हो गयी तो बालकृष्ण ने बहस को आगे नहीं बढ़ाया।

बहू के आने से फ्लैट में रौनक बढ़ गयी। माँ-बेटा दोनों हमेशा खुश रज़र आते। माँ तो धीरे-धीरे दादी बनने का सपना भी देखने लगी थी कि एक दिन बेटे के कमरे से बेटा-बहू की ऊँची आवाज सुनायी पड़ी। फिर धीरे-धीरे आवाज की तीव्रता इतनी बढ़ गयी कि दोनों का आपस में झगड़ने का आभास स्पष्ट मिलने लगा। सरोज स्थिति को सामान्य करने के लिए शेखर के कमरे की ओर बढ़ रही थी कि बहू को अटैची लेकर कमरे से बाहर निकलते देखा। उसके चेहरे का रौद्र रूप देखकर उससे पूछने का साहस वह जुटा नहीं पाई। ऐसी परिस्थिति में क्या करे वह कुछ समझती, इसके पहले बहू घर से बाहर चली गयी। शेखर ने भी उसे रोकने के बजाय स्वयं कमरे के अन्दर जाकर दरवाजा बंद कर लिया।
दो-चार दिन बालकृष्ण मौन रहे लेकिन सप्ताह बाद अपने को रोक नहीं पाये, पत्नी से पूछा-'बहू नाराज होकर कहाँ गयी है?'
'अपने मैके गई है, और कहाँ।'
'कब आयेगी?'
'कोई काम है क्या?'
'नहीं, ऐसे ही पूछा, शेखर से कुछ बात हुई है क्या?' बालकृष्ण बहू-बेटे के बीच झगड़े का कारण जानना चाह रहे थे, पर पत्नी कुछ बता न सकीं।
एक माह का समय बीत गया तो बालकृष्ण से रहा न गया। पत्नी को पास बुलाकर समझाया-'बहू को मैके काफी दिन हो गये.... शेखर से कहो जाकर ले आये। अगर उसे छुट्टी न हो तो मैं ही जाकर ले आऊँ।'
'बहू, कोई अनपढ़-गँवार है जो उसे आप लेने जायेंगे...'
'आखिर मैके कितने दिन रहेगी.... लोग-बाग क्या सोचेंगे' बालकृष्ण ने अपनी पुरानी मान्यताओं को याद कराया।
'सभी लोग तुम्हारी तरह खाली नहीं बैठे हैं जो यह सब सोचते फिरे....'
'ठीक है, पर तुम्हें तो सोचना चाहिए कि शेखर यहाँ अकेला है' पति-पत्नी के रिश्तों की सामाजिकता को बालकृष्ण ने समझाया, तो सरोज असहज हो गयी। खीझकर बोली-'अब वह यहाँ नहीं आयेगी।'
'क्यों?'
'शेखर कह रहा था'
'क्या बात है?'
'दोनों का आपस में झगड़ा हो गया है' सरोज़ ने कारण बताया तो बालकृष्ण के मुख से निकला-'पति-पत्नी में तो झगड़ा होता ही रहता है, क्या हमारे तुम्हारे बीच झगड़ा नहीं होता... शाम को शेखर आये तो उसे तुरन्त बहू को लाने भेज देना।'
'वह नहीं जायेगा'
'क्यों?'
सरोज बेटे के रहस्य को छुपा न सकी बोल पड़ी-'दोनों ने अब अलग होने का फैसला कर लिया है।'
'तुम, यह क्या कह रही हो?'
'वही कह रही हूँ जो बेटे ने मुझे बताया है।'
बालकृष्ण ने बेटे के फैसले को बदलने के ध्येय से कहा-'पहले क्यों नहीं बताया?'
'क्या बताती कि बहू-बेटे ने तलाक लेने का फैसला कर लिया है।'
'तुमने शेखर को नहीं समझाया कि अपने खानदान में किसी ने ऐसी बात सोची भी नहीं है, फिर वह ऐसा कैसे सोचता है?'

'आपके खानदान में अभी तक कोई इतना बड़ा आदमी बना भी नहीं है' सरोज ने अपनी विवशता को भी प्रकट किया-'आप बेकार में अपना दिमाग खराब मत कीजिये' झेंप भी मिटाया-'मुझे तो वह पहले भी अच्छी नहीं लगती थी। लेकिन शेखर उसे बहू बनाकर लाया तो हम भी मान गये' भविष्य की योजना भी बता गयी-'शेखर को वह तलाक दे देगी तो क्या उसकी दूसरी शादी नहीं होगी! उसके लिए एक कौन कहे हजार लड़कियाँ मिल जायेंगी।'
'पर, छोटी-छोटी बातों पर इतना बड़ा फैसला लेना ठीक नहीं, क्या दूसरी से भी झगड़ा नहीं हो सकता।'
'जब होगा तब देखा जायेगा, अभी तो जो शेखर फैसला लेगा, वही मानना होगा।'
'अच्छा, एक बार शेखर को मेरे पास भेजो, मैं भी उससे बात करके देखूँ।' बालकृष्ण ने आशा का दामन नहीं छोड़ा।
'ठीक है, शाम को आयेगा तो आप से बात करने को कह दूँगी।'

शाम होते ही बालकृष्ण दरवाजे की ओर नज़र टिका दिये कि शेखर जब आये तो तुरन्त उसे समझायें। शायद वह अपने फैसले को बदल दे, तभी घंटी बजी। माँ ने

दरवाजा खोला, शेखर अन्दर आते-आते बोला-‘माँ, आज उससे मुक्ति मिल गई।’
‘क्या हुआ?’ वास्तविकता जानने के लिए सरोज ने पूछा,
‘हम दोनों का तलाक हो गया?’ शेखर ने निर्णय का समाचार सुनाया।

बालकृष्ण मन की बात मन में रखकर मौन हो गये। बेटे से कहने के लिए अब कुछ शेष नहीं बचा था।
तलाक मिलने पर शेखर डिप्रेशन का शिकार हो गया। अब वह अधिकांश समय अकेले दरवाजा बंदकर अपने कमरे में लेटा रहता। बालकृष्ण को अपनी पत्नी पर गुस्सा उतारने का अवसर मिला। कहा-‘मैं, पहले ही कहा था कि तुम शेखर को समझाओ कि कोई अच्छी लड़की देखकर निर्णय ले, जो उसकी सोसाइटी के साथ घरेलू माहौल में रह सके... पर नहीं, तुम लोगों को तो उसका साठ हजार कमाना ही दिख रहा था और कुछ नहीं।’
‘बैठे-बैठे बकने से क्या फायदा। अब बेटे की दूसरी शादी के बारे में सोचिए।’
‘रिश्तेदारों और अन्य लोगों से क्या कहोगी?’
‘उन्हें बताया क्या जरूरी है कि शेखर की यह दूसरी शादी है। पहले जो शादी हुई थी। उससे तलाक हो गया है।’
‘ठीक है पर दूसरी लड़की वालों से क्या कहोगी।’
‘शेखर अभी तक ठीक से सेटल नहीं था इसीलिए उसने शादी नहीं की थी। अब सेटिल हो गया है। तो शादी करने का मन बना लिया है?’
‘.... और तलाक की बात।’
‘क्या जरूरी है उनसे भी बताना यह सब।’

‘लेकिन जब उन्हें मालूम होगा तो....’ बालकृष्ण ने नैतिकता का प्रश्न उठाया तो सरोज ने मुख की बात छीन ली- ‘उन्हें कैसे मालूम होगा। हमारे सिवा किसी और को मालूम होगा तब न।’ अपनी बुद्धिमत्ता पर भी उसने गर्व दर्शाया-‘शादी के बात मालूम भी हो जायेगा तो क्या अन्तर पड़ेगा।’

माँ आधुनिकता की चाशनी में आकण्ठ डूब गयी। बेटा भौतिकता की चमक में पहले ही अंधा हो चुका था।
माँ-बेटे के संयुक्त प्रयास से बेटे की दूसरी शादी तय हो गयी। पर इस बार शादी कोर्ट में नहीं, मंदिर में सम्पन्न हुई। आसपास के लोगों के अन्दर प्रश्न उठा कि आखिर बेटे की दूसरी शादी क्यों कर रहे हैं, पर महानगरों की संस्कृति में लोगों के बीच की आध ईंट की दीवार भी मीलों का फासला बनाये रखती है। जिसके कारण उनकी आवाज सुनी नहीं जा सकती और रहस्य अभेद रह जाता है।
नई बहू भी नौकरी करती है। उसे भी पचास हजार मिलते हैं। इसी कारण उसके दूसरे गुण-अवगुण देखने परखने की आवश्यकता नहीं समझी गयी। लेकिन बालकृष्ण के मन में अब भी भय था कि आधुनिकता की आँधी में रिश्तों के परखचे कहीं फिर न उड़ जाये।

रमेश कुमार संतोष

लघुकथा

मजदूर

डिपार्टमेंट में वह छ:ह ही काम करते थे ।सुबह आठ बजे से शाम पांच बजे तक। एक से दो के बीच लंच टाइम होता था जिसमें वह खाना खा कर आराम भी कर लेते थे और हंसी मजाक भी। अपने काम को भी वह मिल बांट कर कर लेते थे और बीच-बीच में हंसी -ठठोली भी कर लेते थे परन्तु भीतर से सब उदास ही होते थे ।यह बात अलग थी कि वह चेहरे पर परेशानी झलकने नहीं देते थे। रोज की तरह आज भी कंता कंटीन में जा कर बारह रोटियों के साथ दाल प्लास्टिक के मगे मे ढलवां कर ले आया है। और भजन)हरभजन (ठण्ठे पानी का जग भर लाया है। सब हाथ धोकर खाना खाने लगे कुलवंत ने बाशे)सुभाष(को कहा "आज यार वह गाना सुना दे ...मन बहुत उदास है।"
"कौन सा ..
"वहीं पिंजरे के पंछी रे तेरा दर्द न जाने कोये
""अच्छा पहले यह रोटी खा लो।"
और सुबह से तन्दूर में बनी सूख गई रोटियों को पतली दाल मेंं भीगो कर सब मजे से खाने लगे।रोटी खा कर वहीं फर्श पर लेट गये
" सुना दे भाई वहीं गाना "..

बाशा दीवार का सहारा ले कर गाने लगा। सब ख़ामोश हो गये। कुलवंत न जाने क्यों अपने को रोक नहीं सका। वह भी उस गाने के शब्दों को बन्द आवाज में भीतर ही भीतर गा रहा है। एक खामोशी है। कोई छत को देखते हुए ...कोई दरवाजे के बाहर देखते हुए ...कोई आंख बंद करके उन शब्दों को जीने का प्रयास कर रहा है। लगता था वह सब उसी को जी रहे हो ...और जैसे ही गाना खत्म हुआ ...बाशा अपनी कमीज से ही आंखें पोंछने लगा क्योंकि गाते गाते उसकी आवाज भारी हो गई थी और आंखें भर आई थी सभी ने ताली बजा कर बाशे का उत्साह बढ़ाया। " हमारी जिंदगी भी तो उस पिंजरे के पंछी की तरह ही तो है।
हां हम सब पिंजरे में कैद है।"
अरे चलो उठो दो बज गए हैं। अभी बहुत काम बाकी है। देखते ही देखते वह सब सामान्य होने लगे और अपने को हंसाते हुए काम में जुट गए ।वह मजदूर जो थे दूसरे शब्दों में कहें तो मजबूर जो थे।

कहानी

शराफ़त अली ख़ान

343,फाइक इन्क्लेव, फेज-2,
पो.रुहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली-243006(उ.प्र.)
मो. 7906849034

वो लड़की

आज बहुत दिनों के बाद मैं चावला रेस्तरां में आकर बैठा हूं । बहुत दिनों नहीं ,बरसों बाद।अब, जब मैं सेवानिवृत्त हो चुका हूं, नौकरी की सारी जिम्मेदारी से मुक्त हो चुका हूं।अब विभाग में मेरी किसी को ज़रूरत नहीं रही।अब कोई फोन पर नहीं पूछता कि मैं कहां हूं? कब मिलूंगा?अब मैं पूरी तरह आज़ाद हूँ।कहीं भी कितनी देर तक बैठ सकता हूँ।किसी को अब मेरी फिक्र नहीं है।शाम अब रात में बदलने को आतुर हो रही है। इस रेस्तरां से मेरी बहुत सारी यादें जुड़ी हुई है। आज से 30 साल पहले यह रेस्तरां इस रूप में नहीं था ।हां, कैश काउंटर की जगह तो नहीं बदली थी। लेकिन पूरा रेस्टोरेंट का नक्शा बदल दिया गया है। अब पुराने वेटर भी नहीं रहे थे।पहले एक छोटे कद का पंजाबी वेटर हुआ करता था ,जो बहुत दौड़ भाग करता था। उस जमाने में पीछे एक फैमली रुम था,जिसमें सिर्फ़ जोडों को जाने की ही अनुमति थी ।उन दिनों मैं स्नातक कर चुका था और स्नातकोत्तर में प्रवेश ले रहा था ।तभी मेरी दोस्ती लता से हुई ।वह बहुत सुलझी हुई और समझदार लड़की थी। मैं
अक्सर उसके साथ चावला रेस्टोरेंट के फैमिली हॉल में जाकर बैठता । उसने पहली मुलाकात में ही मुझसे पूछा था ," तुम कवि तो नहीं हो ?"
क्यों? अकस्मात मेरे मुंह से निकला।
"पता नहीं ,क्यों मुझे कवि नामक जीव से चिढ़ सी है। ये लोग बे -सिर पैर की कल्पनाओं में घिरे रहते हैं।चिपकू किस्म के जीव होते हैं।मैं ने कहा-कवि तो नहीं हूँ, हां,कभी-कभार छोटी बड़ी कहानियां ज़रूर लिख लेता हूँ।
मेरे मना करने और उसके खुशी महसूस करने से मुझे लगा जैसे सारे जहान की खुशियां मेरे दामन में सिमट आई हों।हालांकि मेरी एकाध कविता एक प्रतिष्ठित दैनिक के रविवारीय में छप चुकी थी,किन्तु मैं अपने को कवि नहीं मानता था।

"मेरे ऊपर कहानी लिखोगे"? उसने सपाट सा सवाल किया ।मैं असमंजस में पड़ गया। अगर हां कहता हूं तो कहीं यह नाराज ना हो जाए और ना कहता हूं तो बुरा ना मान जाए ।इसलिए मैंने इस दुविधा से निकलने के लिए बीच का रास्ता अपनाया ।"मैं कोशिश करूंगा "मैंने कहा। वह खुश होकर बोली," नहीं-नहीं ज़रूर लिखना ,वैसे अभी तो कहानी शुरू हुई है ना ?"उसने फिर प्रश्न किया और अब मैंने उसे जवाब न देकर उसे देखकर मुस्कुरा दिया और दिल ही दिल में कहा कि हर कहानी का अंत होता है इसका भी एक दिन हो जाएगा।

उस समय वह B.Ed कर रही थी और उसका सेंटर दूसरे जनपद में पड़ा था इसलिए बाद में उससे मुलाकातें धीरे-धीरे कम होती चली गईं और मैं पढ़ाई पूरी करने के बाद नौकरी पाने के संघर्ष में बहुत अंतर्मुखी हो गया। हालांकि आवारगी का अपना एक अलग ही मज़ा होता है। जिंदगी का आईना आवारगी के दिनों में साफ नजर आता है ।सतरंगी दुनिया के हर रंग आवारगी में बदरंग नज़र आते हैं ।अपने आँखें चुराने लगते हैं और ग़ैर सीने से लगाते हैं ।

काफी संघर्ष करने के बाद और एक दो छोटी मोटी प्राइवेट नौकरी के बाद मुझे वन विभाग में वनविद के पद पर नियुक्ती मिल गई और और मेरी तैनाती सुदूर जनपद में हो गई ।मेरे जहन से लता की तस्वीर धुंधली पड़ गई थी । एक दिन जब मैं दो-तीन साल बाद अपने घर से अवकाश के बाद तैनाती पर जा रहा था तो जिस ट्रेन में मैं चढ़ रहा था ,उस ट्रेन से लता मेरे ही कपार्टमेंट के दरवाजे से उतर रही थी। मेरे दिमाग की घंटियां बजने लगी ।वह भी तुरंत पहचान गई और खुश हो गई ।मुझे वर्दी में देखकर उसका चेहरा खिल गया था ।उसने बताया की B.Ed करने के बाद चंदौसी के कॉलेज में प्रवक्ता हो गई है और वहीं अकेले रहती है और वह यहां बरेली अपनी बहन के पास आई थी। मैंने उसे बताया कि मैं शाहजहांपुर जनपद में वहां के तराई जंगल में तैनात हूं और महीने में एक या दो बार घर पर मां बाप से मिलने जा पाता हूं ।शादी का जिक्र ना उसने किया और ना ही मैंने। मैं पढ़ाई के दिनों में अक्सर उदास हो जाता था। तब है मुझे सकारात्मक बातों से मुझे सहारा देती थी और कहती है तुम निराश मत हो ,एक दिन तुम जरुर सफल होगे। मैं उसकी बातों को हंस कर टाल देता ।मगर वह मुझे निराशा के समंदर से निकालने का भरसक प्रयत्न करती। वह मुझे दुनिया जहान के उदाहरण सुनाती। लोग कितनी असफलता के बाद सफलता के शिखर पर पहुंचे ।मुझे अच्छा लगता कि वह नकारात्मक विचार वाली लड़की नहीं है। मेरी तरह बहुत जल्द निराश नहीं होती।

उन दिनों पैसों की बहुत तंगी रहती थी ।मगर लता हमेशा मुझे इस तंगी से दोचार नहीं होने देती। फिल्में दिखाने अक्सर वही ज़िद करके ले जाती।एक दिन नॉवल्टी में हम दोनों दिलीप कुमार की 'संघर्ष'पिक्चर देखने गए थे। बालकनी काफी खाली थी ।फिल्म शुरू होते ही पता नहीं लता को क्या हो गया? मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर बोली "तुमने मुझसे पहले भी किसी से मोहब्बत की है ?"मेरी हथेली जो उसके हाथ में अब तक थी ,जड़वत हो गई थी।

" हां ,की है ।मगर वेजीटेरियन किस्म की ।"

"क्या ,वेजिटेरियन लव ?यह भी कोई मोहब्बत हुई?"वह चौंकी सी थी।

दरअसल मैंने उससे करीब 10 मीटर की दूरी से बातें कीं।वो भी इशारों से। हमारे और उसके घर के बीच एक आम रास्ता था। इस पर गांव के लोग हमेशा गुजरते रहते थे ।वह गली के उस पार दरवाजे पर या छत पर रहती और वहीं से बातें इशारों में करती ।

" फिर कभी पास भीआई?उसने सवाल दाग़ा

" हां, आई थी ,जब उसकी शादी हो गई थी।एक दिन मैं गांव के एक मेडिकल स्टोर पर खड़ा था। वह अपने पति के साथ आई और जानबूझकर मेरे करीब से गुजरी मुझे देखते हुए , मेरे जिस्म की गंध महसूस करते हुए।"मैं ने उसके सवाल का जवाब दिया।

"फिर.....फिर..वो उत्तेजित सी हो चली थी। ।उसी समय फिल्म के परदे पर वैजयंती माला का गाना शुरू हो गया "तस्वीर -ए -मोहब्बत थी जिसमें, हमने वो शीशा तोड़ दिया -तोड़ दिया" और यही मेरा जवाब है ,जो यह हीरोइन गा रही है।"मैंने कहा।

सर्दियों के दिन थे वे।

एक दिन मैं आरक्षित वन की जंगल कोठी पर कमरे में बनी बोन फॉयर(कमरे के एक तरफ चिमनी नुमा अंगीठी) के पास बैठा कैशबुक पर झुका हुआ कुछ लिख रहा था ,तभी मैंने देखा कि कमरे में एक बैग लिए मेरा वॉचर राजाराम अंदर आया ।मैंने पूछा "कौन आया है ?"

वह बोला " साब,कोई मेम साब हैं।"

मैं उठ खड़ा हुआ ।तभी सामने से लता को अंदर आते देखा ।वह मुस्कुराते हुए बोली ,"चौंक गए ना? मुझे मालूम है तुम्हें उम्मीद भी नहीं होगी कि मैं यहां इतने बीहड़ जंगल में अकेली आ भी सकती हूं ।"

मैं ने बनावटी नाराज़गी दिखाई ,बोला -"बेवकूफ हो तुम,

अरे सूचना दे देती तो तुम्हें लेने जीप चली जाती और मैं खुद भी आ जाता तुम्हें लेने ।तुमने क्यों परेशान उठाई?"

" अरे !इसमें परेशानी की क्या बात है। वैसे भी यह मेरी सरप्राइज ट्रिप है। कुछ दिन कॉलेज से छुट्टियां मिलीं हैं। और मैं यह देखना भी चाहती थी कि तुम इस घने जंगल में अकेले कैसे रहते हो ?'

'अकेला क्यों ?अधीनस्थ कर्मचारी हैं ,वाचर हैं। जो दिन रात मेरे साथ रहते हैं ।'

वो तो ठीक है, फिर भी...

' दरअसल मेरी नौकरी कुछ ऐसी अस्थिर थी कि कोई लड़की वाला तैयार नहीं हुआ कि उसकी लड़की बीहड़ जंगल के बीच में रहे। दूसरे मेरे मां-बाप नहीं रहे। और मेरी व्यस्तता भी इतनी रही है कि मेरे पास विवाह के बारे में सोचने का वक्त नहीं रहा। मुझे आभास होता है कि मेरे अधीन मीलों लम्बा जंगल मेरे सीने पर उगा हुआ है, जिसकी मुझे दिन-रात चिंता रहती । मगर अपने अविवाहित रहने का उसनें भी कोई कारण नहीं बताया।

किंतु उस रात वह बहुत खुश रही। आधी रात तक हम कमरे में बनी बोनफॉयर के पास बैठे आग तापते हुए बातें करते रहे। कमरे में बनी बोनफॉयर उसने पहली बार देखी थी ।वह देखकर चौंक गई ।कमरे में इतनी बड़ी अंगीठी जिसका धुआं अंगीठी के ऊपर बने एक चौकोर पाइप के जरिए छत पर निकल रहा था। यह ब्रिटिश ज़माने की कोठी थी ।पुरानी फिल्मों में कभी-कभी इस तरह की अंगीठी कमरे में दिखाई दे जाती हैं। अंग्रेजों ने अपने शासनकाल में जंगलों के बीचों-बीच इस तरह के गेस्ट हाउस और अधिकारियों की कोठियां बनाई थी। आसपास कर्मचारियों के मकान भी बनाए गए थे जो जंगल में आवासीय कॉलोनी का आभास कराते थे ।

उस रात वह बिल्कुल नहीं सोई ।उसकी बातें जैसे आज ख़त्म ही नहीं होनी थीं। मुझे भी एक भावातिरेक का अहसास हुआ।

अगले दिन सवेरे करीब ग्यारह बजे जब मैं स्टाफ के साथ जंगल गश्त करके लौटा तो लता बेखबर सो रही । मैंने उसे उठाया और बताया कि आज स्टाफ ने जंगल में देसी पार्टी का इंतजाम किया है, तुम तैयार हो जाओ।

लता बोली "मगर मुझे तो आज शाम को निकालना है, कल कॉलेज है मेरा ।"

मैंने कहा शाम अभी दूर है मैं शाम को तुम्हें ट्रेन तक छोड़ आऊंगा ,चिंता की कोई बात नहीं।

लता घंटे भर में नहा धोकर तैयार हो गई और मैं उसे लेकर जंगल के बीचो-बीच बह रही नहर के किनारे पर बने पुल पर ले गया।

स्टाफ सब तैयारी में लगा था। वॉचर प्रीतम सिंह ने उपलों का एक पिरामिड सा बनाकर उसमें आग लगा दी थी और अब आग हल्की होने का इंतजार कर रहा था। आग के कम होते ही उसने आटे की लोई को हथेली पर रखकर बाटी बनाई और उसे साल के दो पत्तों के बीच रखकर उपलों के बीच में रख दी ।इस तरह वह एक-एक करके बाटी रखता जा रहा था। लता गौर से उसके काम को देख रही थी ।मैंने उससे कहा "यह जंगल का फास्ट फूड है ,अभी यह बैगन में लहसुन खोंस कर उसको भी भूनेगा फिर उड़द की दाल अपने अंदाज से बनाएगा और लहसुन धनिया की स्पेशल चटनी बनाकर परोसेगा ,मगर उससे पहले बाटी

को बीच में खोलकर उसमें देसी घी डालेगा।"

लता यह सब देखकर बहुत उत्साहित हो रही थी ।उसने कहा "मगर पानी ?"मैंने कहा यहां पानी की जगह मट्ठा पिया जाता है।यहां ये करीब के एक सरदार के झाले से पहले ही एक केन में भरकर ले आए हैं।

दोपहर चोखा बाटी खाकर लता काफी देर तक मेरे साथ नहर के किनारे किनारे जंगल में घूमती रही। शाम को मैं उसे छोड़ने रेलवे स्टेशन तक गया ।ट्रेन में उसके बैठने के बाद मैंने उससे पूछा "अब कब मिलोगी?"

वह हंसी, मगर उसकी आंखों में नमी सी थी ।उसने शायराना अंदाज़ में कहा "अब तो जाते हैं मयकदे से 'मीर, फिर मिलेंगे अगर ख़ुदा लाया ।"

उसके बाद लता की कोई खबर नहीं मिली ।मैं भी बहुत व्यस्त हो गया था ।वक्त मुट्ठी में रेत की तरह इतनी जल्दी निकल गया कि पता भी नहीं चला। और मैं सेवानिवृत्त हो गया।

अभी तक मैं पुरानी यादों में खोया हुआ ही था कि वेटर की आवाज ने मुझे वर्तमान में ला पटका।

'साब और क्या लाऊं?'

मैंने अपनी मेज की तरफ देखा ।चाय काफी देर की ठंडी पड़ चुकी थी और उसके ऊपर एक बारीक कत्थई सी परत जम चुकी थी ।मैंने वेटर की तरफ देखा।

' एक चाय और वेज सैंडविच ले आओ।'मेरा इतना कहते ही वेटर ठंडी चाय उठा कर चल दिया।

अब मैं सहज हो चुका था और मैंने सामने मेज की तरफ देखा। मुझे आभास हुआ कि मैं स्वप्न की अवस्था में पहुंच चुका हूं ।सामने की मेज पर मेरी तरफ जो लड़की बैठी थी उसे देखकर मुझे लगा कि 20- 25 वर्ष के पुराने दिन फिर लौट आए हैं।हूबहू लता की शक्लो-सूरत की लड़की सामने बैठी दिखाई दी। मैं काफी देर उसे देखता रहा। वही आंखें, वही हंसने का अंदाज और चेहरे की बनावट।

मैं उठा और उस लड़की के पास खड़ा हो गया ।उसने मुझे प्रश्न भरी नजरों से देखा। मैंने झिझकते हुए पूछा " माफ करिएगा, आपका नाम क्या है बेटी?"

उसने नज़रें नीची करते हुए जवाब दिया" सुमन लता"

सिंदूर का कर्ज़

तुम आए थे
कायरता की चाल में लिपटे,
निहत्थों की बस्तियों पर
बारूद की बौछार लेकर।
तुम्हारे इरादे थे सिंदूर लूटने के,
पर समझ लो—
यह मिट्टी माँ है,
और माँ के आँचल पर
कोई दाग़ हम सह नहीं सकते!
तुम्हारी गोलियाँ
हमारे बच्चों की हँसी पर बरसीं,
पर हर गिरती लाश के साथ
धरती ने एक योद्धा को
जन्म दे दिया।
ये वही देश है—
जहाँ बालक जन्म लेते ही
धरती की शपथ खाकर
शत्रु के वक्ष चीरने को तैयार हो जाते हैं।
हमारे सैनिक
सिर्फ़ बंदूकें नहीं उठाते,
वो उठाते हैं
राष्ट्र की लाज,
माँ के आँचल की मर्यादा,
बहन के सिंदूर का मान।
तुम्हारे हथियार
हमारे हौसलों के आगे
तिनके बनकर टूट गए,
जब हमारे वीर
तिरंगे को कंधे पर लेकर
मौत के मुँह में
जयघोष करते हुए कूद पड़े।
सिंदूर का कर्ज़
हमने रक्त से चुकाया है—
अब माँग फिर से सजी है
लेकिन इस बार
आँसू नहीं,
बलिदान की ज्वाला उसमें जल रही है।
और सुनो,
जो सिंदूर छीनने चले थे—
अब राख भी नहीं बची तुम्हारी,
क्योंकि भारत की धरती
अपनों को शरण देती है,
दुश्मनों को शमशान।

प्रेम विज

पद्मा अग्रवाल
बेंगलुरु,कर्नाटक
Padmaagrawal33@gmail. Com

दक्षिण भारत तुम्हें सलाम

लालिमा ऑफिस से लौटी तो बहुत खुश थी , "माँ , मेरा प्रोमोशन हुआ है , मुझे चेन्नई जाना है ".

"नहीं , इतनी दूर और तमिल बोलने वाले लोगों के बीच तुझे बहुत परेशानी होगी ? इसलिये अपने बॉस से मना कर दो . तुम हिंदी बोलने वाली हो वहाँ तुम्हारी बात को कोई नहीं समझेगा और फिर डोसा इडली साँभर से क्या तुम्हारा पेट भरेगा ? नहीं .. नहीं मैने कह दिया तुम्हें नहीं जाना... तो नही जाना..."

मां को घबराया देख उसने उन्हें समझाने की बहुत कोशिश की लेकिन वह अपनी जिद् पर अड़ी रहीं .

लालिमा को दक्षिण के मंदिऱों की वातुकला बहुत लुभाती थी वह चाहती थी कि वह समुद्र के किनारे लहरों को अठखेलियाँ करते देखे . वह उत्तर प्रदेश के हिंदी भाषी शहर में पैदा हुई , वहीं पली बढी और अब नोयडा में सर्विस कर रही थी ... इसलिये वह किसी भी हालत में अपने जीवन में मिले इस अवसर के रोमांच को नहीं छोड़ना चाहती थी . जब वह ऑफिस में अपने मित्रों से बात कर रही थी तो उसकी सहेली निया बोली," चेन्नई बिल्कुल मत जाना, न अपनी बोली बोलने वाला और न ही अपनी तरह का खाना मिलने वाला . तुझमें टैलेंट है तो बहुत सारे मौके मिलेंगें ..."

वह समझ नहीं पा रही थी कि आखिर चेन्नई जाने से सब लोग इतना क्यों मना कर रहे है ... सबका एक ही कहना था कि वहाँ हिंदी न कोई समझेगा और न ही बोलेगा .. अपने ही देश के एक भाग के बारे में इतनी नकारात्मक बातें सुन कर उसका निश्चय और भी दृढ हो गया था. उसने अपनी माँ को समझा दिया था कि मैं कुछ दिनों तक रह कर आती हूँ , यदि ठीक नहीं लगेगा तो मैं रिजाइन करके पुरानी जॉब ले लूँगीं .

मेरी माँ जो उत्तर प्रदेश के उन्नाव में रहतीं थींऔर हिंदी के सिवा कुछ नहीं जानतीं उन्होंने आँसुओं के साथ मुझे विदा किया था . वह जोर से हँसते हुए बोली ,"ऐसा लग रहा था कि वह जेल की सजा काटने जा रही थी ," सब हँस पड़े थे .

"नहीं मान रही हो तो जाओ दुखी होकर लौटना पड़ेगा "

लालिमा आई टी प्रोफेशनल थी. वह मन ही मन थोडाघबराय़ी हुई थी लेकिन उसके मन में नई जगह को जानने के प्रति सुलभ उत्सुकता थी. वहाँ की कुछ विशेष बातें जो देखने को मिलीं.

महाबलिपुरम के मंदिर चेन्नई से 55 किलोमीटर दूर है , सातवीं शताब्दी में यह शहर पल्लव राजाओं की राजधानी था . प्राचीन शहर अपने भव्य मंदिरों , स्थापत्य और सागर तटों के लिये बहुत प्रसिद्ध है. द्रविड़ वास्तुकला की दृष्टि से यह शहर विशेष रूप से जाना जाता है . यह3 पत्थरों को काट कर मंदिर बनाये गये हैं.

महाबलिपुरममें पहाड़ी की ढलान परपर मौजूद 250 टन वजनी चट्टान (mysterious stone) को भगवान् कृष्ण के माखन (krishna's butter ball) के रूप में जाना जाता है . इस बटर बॉल को सुनामी भी नहीं हिला नहीं पाई . यह 1300 साल से अपनी जगह पर अडिग खड़ा हुआ है . यहाँ कामरीना बीच बहुत मनमोहक एवं सुंदर एवं पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र है .

चेन्नई की तपती उमस में महिलायें की नाइटी सबसे प्रैक्टिकल ड्रेस दिखाई देती है . यहाँ की हर उम्र की महिला बालों में गजरा लगाती हैं . अधिकांश दुकानों के बाहर जूते उतारने का रिवाज वहाँ मैंने देखा . मुरुगन इडली रेस्टोरेंट में आपके पहुँचते ही आपके ऑर्डर देते ही चटनी साँभर ,बड़ा, इडली ,डोसा, रसम की विविधता मिनटों में परोसी जाती है , जो काबिले तारीफ है , समुद्र तट की हवा , चंचल माहौल , चाँद की रोशनी आपके मूडको तरोताजा महसूस कराते हैं . यहाँ पर राजनेताओं के लिये बड़े बड़ेकटऑउट सड़क के किनारे दिखाई पड़ते हैं . यहाँ की जनता अपने नेताओं को जी जान से प्यार करती है . यहाँ पर प्रत्येक गली में कम से कम एक नृत्य और संगीत एकेडमी है . यहाँ नृत्य और संगीत से लोगों को बहुत प्यार है .यहाँ पर लोगों के पास बहुत पैसा है काँजीवरम् साड़ी यहाँ की पहचान है और चेन्नई में सोने की खरीदारी के बारे कौन नहीं जानता . ये तो चेन्नई की सूक्ष्म विशेषताय़ें ... अब हिंदी भाषा के अपने अनुभव पर चर्चा करती हूँ . एक डरी सहमी उत्तर भारतीय के जीवन का खुशनुमा अनुभव ...

जब चेन्नई के हवाई अड्डे पर उतरी तो भाषा को लेकर थोड़ा नर्वस थी प़रंतुएक तमिलियन के साथ मेरी बातचीत सबसे पहले मेरेकैबड्राइवर के साथ एयरपोर्ट से मेरी कंपनी के गेस्टहाउस तक जाते समय हुई थी . मैने डरते हुए इंग्लिश में उससे गूगल पर सर्च करते हुए रास्ता समझाया , जो उनके पल्ले नहीं पड़ा था . उन्होंने

कहा , “हिंदी में बोलो , मुझे थोडा हिंदी समझौता हु “(हिंदी में बोलें , मैडम , मैं हिंदी थोडा समझ सकता हूँ) एयर पोर्ट से गेस्टहाउस की लगभग 40 मिनट की यात्रा मैंने हिंदी में बात करते हुये की . और आप सब मेरा विश्वास करिये कि उनकी टूटी फूटी हिंदी सुनना वाकई सुखद और संतोष जनक अनुभव था .

अगली सुबह जब मैं अपने बॉस के पास रिपोर्ट करने पहुँची तो वह महोदय भी तमिल थे. हमनें उनसे नमस्कार किया तो वह हिंदी में बोले , “हेलो , ज्यादा मुश्किल तो नहीं आईना ऑफिस सर्च करने में (मुझे उम्मीद है कि ऑफिस खोजनें में ज्यादा कठिनाई तो नहीं हुई होगी) यह सिर्फ मुझे सहज बनाने का उनकी ओर से किया गया प्रयास था . . उन्हें भी ज्यादा हिंदी नहीं आती थी ये मुझे बाद मालूम हुआ . लेकिन वह मुझसे अक्सर हिंदी में बात करने की कोशिश करते रहते हैं यद्यपि कि वह अपने प्रयास में असफल हो जाते हैं , इससे कोई फर्क नहीं पड़ता परंतु उनके हिंदी बोलने और सीखने के प्रयास को देख कर मुझे बहुत खुशी होती और हिंदी भाषा की स्वीकार्यता देख उसका भविष्य उज्जवल समझ कर मेरी अंतरात्मा को संतोष के साथ खुशी का अनुभव होता ...

वहाँ रहते हुए मैंने बहुत सारे दोस्त बनाये जो हिंदी नहीं जानते थे लेकिन मुझे कोई समस्या नहीं हुई बल्कि वह लोग मेरे साथ रह कर टूटी फूटी हिंदी बोलने और समझने लगे थे . मुझे सबसे अच्छा लगता था कि जब वह मेरी हिंदी में कही बात को नहीं समझ पाते थे तो वह खीझते नहीं थे वरन्मुस्कुराते थे . वह सिर्फ मेरे लिये एक वाक्य बनाने के लिये कुछ हिंदी के शब्दों को एकसाथ रखने की कोशिश करते हैं , उसका कारण है कि हिंदी का उनका शब्दकोष बहुत सीमित है .

मेरा अनुभव रहा कि यह सिर्फ मेरे ऑफिस के लोग और मेरे दोस्त नहीं हैं जो तमिल हैं , यहाँ के स्थानीय दुकानदार, ऑटो चालक ,सब्जी विक्रेता भी आपकी बात को समझने का पूरा प्रयास करता है . वह आपके लिये जो कुछ भी कर सकते हैं वह करने की पूरी कोशिश करते हैं . यह देखते हुये कि आप उनका सम्मान करते हैं तो वह भी आपका सहयोग और सम्मान करते हैं . यह हिंदी , तमिल , तेलुगू, कन्नड़ या किसी अन्य भाषा की बात नहीं है , यह तो आपसी सम्मान देने और लेने की बात है . पिछले एक साल में मैंने तमिल लिखना और पढना सीख लिया और अपने ऑफिस और आस पास के बहुत से लोगों को हिंदी बोलना भी सिखा दिया है . और जब भी मैं तमिल में लिखा हुआ कुछ भी पढती हूँ तो वहाँ पर बैठे लोगों के चेहरे पर जो चमकीली सी मुस्कान दिखाई पड़ती है , वह लोग मेरे प्रयास की सराहना करते हैं वह मुझे आनंद की अनुभूति से भर देती है . वैसे ही जब वह लोग हिंदी बोलने या पढने सीखने की कोशिश करते हैं तो मुझे अपना चेन्नई प्रवास सार्थक और उपयोगी प्रतीत होता है .

जब आप हिंदी बोलते हैं , तो वह आपसे प्यार करते हैं और जब आप उनसे उनकी भाषा में संवाद करने की कोशिश करते हैं तो वह आपसे बहुत ज्यादा प्यार करते हैं.

जब मैंने तमिल थोड़ी थोड़ी सीख ली थी और एक दिन मैंने अपनी दोस्त को मेसेज किया ,”दोपहर का भोजन पोलामा? (क्या हम दोपहर के भोजन के लिये जाते हैं) “

दोपहर के भोजन के दौरान , मुझे जो उत्तर मिलता है ,” वह है , पाँच मिनट में चलो (हम 5 मिनट में चले जायेंगें) ढेर सारी स्माइलीज के साथ “. जब मैं कॉफी काउंटर पर महिला से पूछता हूँ , “रेड कॉफी एक्का (दो कप कॉफी , बहन)” वह जवाब देती हैं , “सर 5 मिनट प्रतीक्षा करेगा, दूध उबालो हो रे अबी (सर ,कृपया 5 मिनट प्रतीक्षा करें , दूध उबाला जा रहा है) “

यदि आपके मन में यह सोच है कि आप हिंदी में बात कर रहे हैं , इसलिये आपके साथ बुरा व्यवहार किया जायेगा , या वहाँ आपको अपमानित किया जायेगा तो मैं कह सकती हूँ कि आप गलत सोचते हैं . यहाँ मैं सीख सकती थी

“त्रिमरप्पदुनत्रत्रुनत्रल्लदु

अत्रेमरप्पदुनत्रु“

(किसी की सहायता को भूल जाना अच्छा नहीं है , बुरी घटना को भूल कर भी उसी क्षण भलाई करना अच्छा है , जिसमें उसे फँसाया गया हो)

बहुत जल्दी ही मैं चेन्नई से बाहर जाऊँगी , अपने साथ लेकर जाऊँगी यहाँ के लोगों की अद्भुत यादें , मेरी टूटी फूटी तमिल और उनकी टूटी फूटी हिंदी और ढेर सारी खुशियाँ और लोगों के खुश चेहरे , चाहे मेरे सहकर्मी साथी हों या दैनिक ऑटो चालक , या मेरे पानी की आपूर्ति करने वाला लड़का , या मेरे फ्लैट के बगल में होटल में काम करने वाला लड़का , उनसे मैं बार बार हिंदी में बात करती थी , उन लोगों ने मुझे कभी भी अपमानित नहीं किया और न ही अस्वीकार किया .

“हिंदी वजह , तमिल वजह और हर दूसरी भाषा वजह “

दक्षिण भारत में इतने साल बिताने के बाद मैंने एक स्मार्ट नवयुवक जो कन्नड़भाषी है , उसके साथ शादी कर ली . मेरे जीवन में खुशियाँ लाने के लिये दक्षिण भारत तुम्हें मेरा सलाम .

मैं सोचती हूँ कि हिंदी दिवस की शोशेबाजी से बच कर , हिंदी भाषा को जबर्दस्ती थोपने के बजाय जन सामान्य अर्थात् हम सभी मिलकर हिंदी की स्वीकार्यताके प्रति ईमानदारी से प्रयास करें और हम दूसरी भाषाओं को सम्मान की दृष्टि से देखें ऑर सीख कर उनके उत्कृष्ट साहित्य को हिंदी भाषियों को उपलब्ध करवायें, तो वह दिन दूर नहीं जब हिंदी सर्वग्राह्य बन कर असलियत में राष्ट्र भाषा बन सकेगी .

कहानी

बृज गोयल

बदलते मूल्य

13 जनवरी की कड़कती सर्दी में रजाई पर कंबल डाल लिया, फिर भी पैर गर्म होने का नाम नहीं ले रहे हैं। सारा दिन मौजे में बंद रहने पर भी न जाने कैसे इतने ठंडे हो जाते हैं; अपनी गर्माहट समेटते-समेटते अचानक गुमटी की छत पर गोबर के उपले बनाती चमेली का ख्याल आ गया।

दोपहर धूप की तलाश में मैं ऊपर छत पर गई तो सामने बैठी शांता उपले बना बनाकर यत्न से रख रही थी। उसकी साड़ी हवा में बुरी तरह उड़ रही थी। वह सिर ढकने का असफल प्रयास बार-बार कर रही थी। लेकिन ठंडी हवा उससे जिद्दी बच्चों जैसी ठिठौली कर उसकी साड़ी को पतंग बना लेना चाहती थी। बेचारी बेबस सी शांता ठंडी हवा के सामने खिसियानी सी बैठी, उपले बनाने में व्यस्त थी।
मैंने उसे टोका- “कहो शांता ठंडी हवा का आनंद ले रही हो...?”

वह हल्के से हंसी, फिर उड़ती साड़ी का कौना मुंह में दबाकर उपले बनाने लगी। पिछले बारह सालों में कितनी बदल गई है शांता... जब मैं आई थी इस कॉलोनी में, तभी रामदास ऑपरेटर ने भी दो कमरों वाला क्वार्टर लिया था बस सड़क का फासला है। इधर इंदिरा कॉलोनी - तीन कमरों के क्वार्टर, उधर कमला कॉलोनी है। इधर मेरा क्वार्टर कौने का है, उधर रामदास का भी कौने वाला है, जिससे रामदास के यहां होने वाली हर छोटी बड़ी बातों की भनक मुझे होती रहती है। वैसे भी रामदास की जोरू शांता बहुत व्यवहार कुशल है। पास पड़ोस के घर में उसका अच्छा आना जाना है। वह अपनी जरूरत के लिए हमेशा गाय या भैंस जरूर रखती है, जिससे मुझे बहुत फायदा है।

वह होली से दो दिन पूर्व ही बरकुले की पांच माला बनाकर भेज देती है। जाड़ों में रामदास खेत से कभी बथुआ, चने का साग या सरसों ले आता, तो साफ करके काट कर भेज देती, साथ में कटोरा भर मक्के का आटा भी लाना नहीं भूलती। शांता के इस प्यार भरे व्यवहार ने छोटे बड़े की सब सीमाएं मिटा दी हैं।

शांता के यहां जब भी कुछ कीर्तन, जन्मदिन आदि होता, मैं जरूर जाती थी। शांता का बेटा नरेश बड़ा उद्दंड है। वह ना तो पढ़ने लिखने में ही रुचि रखता है और ना ही कुछ काम सीखने में। मां बाप का कहना बिल्कुल नहीं मानता। कोई और भी समझाए तो उल्टा जवाब हाजिर है।

शांता की एक बेटी भी है जो पढ़ाई में होशियार होने के साथ-साथ घर के हर काम में निपुण है। उसको देखकर नरेश और चिढ़ता रहता है। बाइस साल का होने पर भी जब नरेश इंटर पास नहीं कर पाया, तो हताश और उदास होकर शांता व रामदास उसकी शादी की बात सोचने लगे। मैंने उन्हें समझाया- “बेरोजगार की शादी करोगे तो मुसीबत होगी।” पर उनकी दलील थी कि जब कंधों पर गृहस्थी का बोझ पड़ेगा तो कमाना जरूर सीख लेगा। अकेला बेटा था, रिश्तों की क्या कमी गंगा पार गांव से नरेश का विवाह हो गया और सुंदर सी चमेली दुल्हन बन छम छम करती आ गई।
रामदास, शांता, रुचि सब चमेली से बहुत खुश थे। शांता को बहू के रूप में घर की सहायिका मिल गई थी। गांव की सीधी, भोली-भाली चमेली ने आते ही चौका चूल्हा संभाल लिया था। शांता की बहू आने की साध पूरी हो गई थी। वह खुश खुश घर के कामों में चमेली का हाथ बंटाती रहती थी। पर न जानेक्यों नरेश की त्योरी चढ़ी रहती। वह जब भी घर में होता कुछ ना कुछ बहाना लेकर दंगा शुरू करदेता, कभी खाने की थाली तो कभी सब्जी की कटोरी या चाय का कप ही फेंक चमेली को मार देता।जबकि उसके आते ही चमेली उसकी सेवा में लग जाती।वह बेचारी सुबक कर रह जाती। अगर रामदास या शांता कुछ कहते तो उनसे भी वह लड़ता था। सबउससे दुखी थे। चमेली को मायके नहीं जाने देता। उसके भाई या पिता आते, तो उनसे भी झगड़ाकरता, इसी तरह एक साल निकल गया। एक दिन नरेश नहीं था चमेली का भाई आया तो झट शांताने चमेली को मायके भेज दिया। जब नरेश आया तो उसने खूब कोहराम मचाया और अगले ही दिनचमेली को लेने चला गया, पर वहां पहुंचकर तो चमेली शेरनी हो गई थी। उसने उसके साथ आने सेसाफ इंकार कर दिया और चमेली के पिता भाई ने भी उसे उल्टे पांव लौटा दिया।

अब नरेश को कुछ चेतना सी हुई और वह काम

की तलाश में घूमने लगा। मगर छोटा काम करने में उसकी मानहानि थी। बड़ा पाने की योग्यता नहीं थी, पर सड़कों पर घूमते घूमते एक नेता ने जन्म ले लिया। इसके लिए किसी डिग्री या तजुर्बे की जरूरत नहीं थी। थोड़े ही दिनों में वह बढ़िया खददर के कुर्ते पजामे में दिखने लगा। देखते देखते उसके ठाठ बाट बढ़ गए। मैंने एक दिन शांता से कहा-

"अब तो नरेश कमाने लगा है... सब ठीक हो जाएगा।"

शांता परेशान सी बोली- "क्या कमाता है बहन जी, गांव के सीधे-साधे आदमियों को झूठे आश्वासन देकर बहकाता रहता है। वह इसकी चाल में फंसकर कुछ पैसे दे देते हैं, जिससे यह अपनी नई-नई पोशाक बनवाता रहता है। अब तो ये भी रिटायर हो गए हैं, बस पेंशन पर ही निर्भर हैं। इधर चमेली भी नहीं आ रही कि इसे कुछ फिक्र हो।"

यहां से जाने के आठ महीने बाद चमेली ने बेटे को जन्म दिया। रामदास खबर पाते ही दौड़ गए।

चमेली से आने को कहा पर वह नहीं आई। शांता पोते का मुंह देखने के लिए बेचैन थी, पर नरेश के ढंग से दुखी थी। रामदास तो जब-तब पोते को मिल आते थे और कुछ ना कुछ दे आते थे। हर बार चमेली से आने को कहते पर वह राजी नहीं होती। इसी तरह दो साल निकल गए। रिंकू पैदल चलने लगा था। अब धीरे-धीरे चमेली के समझ में आने लगा था कि नरेश के भरोसे तो जिंदगी अपाहिज बन जाएगी। फिर रिंकू के भविष्य का भी प्रश्न है, यही सब सोच कर चमेली, रामदास के साथ आ गई। शांता तो बहुत खुश हुई। चमेली ने आते ही फिर चूल्हा चौका संभाल लिया।

दिन महीने बीतने लगे। दस महीने बाद फिर चमेली को बेटा हुआ। शांता ने खूब खुशी मनाई। बैंड-बाजेसे कुआं पुजवाया। चमेली भी निहाल हो गई। बेरोजगार को बैंक भैंस दिलवा रहा था, सो उसी के तहत चमेली के नाम से रामदास ने क्वार्टर, बैंक को गिरवी रखकर तीन अमेरिकन भैंस ले ली। भैंस खूब दूध देती थीं। सारा दूध कॉलोनी के लोग ले लेते थे और समय पर पैसा दे देते थे।

इस तरह उनका काम मजे में चल रहा था। रामदास, शांता, चमेली तीनों भरपूर मेहनत करते हैं। चमेली तो गोबर के उपले बनाकर भी बेच लेती है। रामदास हर महीने बैंक की किस्त जमा करता है। रिंकू टिंकू स्कूल जाते हैं। घर की व्यवस्था बढ़िया ढंग से चल रही है। चमेली अब बहुत होशियार हो गई है। घर के साथ-साथ अब बाहर भी काम करने लगी है। लेकिन नरेश दंगा जरूर मचाता है।

चमेली को मारना पीटना भी जारी है। वह नहीं सुधरेगा... यही लगता है। अचानक एक दिन बाहर सड़क पर शोर सुनाई दिया। बालकनी से देखा-

चमेली के हाथ में जलती लकड़ी थी। वह साक्षात चंडिका बनी, नरेश के पीछे दौड़ रही थी। नरेश "अरे साली, अरे साली" कहकर आगे आगे भाग रहा था।

तभी चमेली की आवाज सुनाई पड़ी- "बारह साल बहुत पीट लिया अब नहीं पिटूंगी।"

रामदास शांता खड़े हंस रहे थे। मुझे भी हंसी आ गई।

लघुकथा

चंद्रकला जैन

डोनर

फिजियोथेरेपिडिपार्टमेन्ट में कार्यरत मुख्य थेरेपिस्टअनुभा, सहेली को गर्व से बेटे के बारे में बता रही थी,

"इतना होशियार है न अर्जुन, क्या बताऊं पल्लवी! कोई भी चीज सीखता बहुत जल्दी है, डरता तो है ही नहीं। अभी चौदह का भी पूरा नहीं हुआ है, और बढ़िया बाइक चलाता है। मुझे मेट्रो स्टेशन से लेने आ जाता है, दोस्तों के साथ जाने कहां-कहां के चक्कर लगा आता है।"

तभी बाइक पर सवार बेटा, दोस्त के साथ फिजियोथेरेपिसेन्टर पर, अनुभा के पास आया, घर की चाभी लेकर फर्राटे से निकल गया।

अनुभा की लाड़ भरी आंखें बेटे को ओझल होते निहार रही थी।

बिना हेलमेट के तेजगति से दोनों बाइक सवारों को जाते देखकर वहां खड़े सीनियर डॉक्टर चुप न रह सके, गंभीर स्वर में अनुभा से बोले,

"मैडम, आपका बेटा समाज सेवा भी खूब करेगा।

अनुभा की गर्वमिश्रित नजरें डॉक्टर साहब की तरफ उठी,

"पोटेंशियल डोनर है वह, जल्दी ही अंगदान करेगा!"

मां के दिल में कटार चुभ गई।

कहानी

वाजिद हुसैन सिद्दीक़ी

पीलीभीत बायपास, बरेली,
(उ प्र) 243006 मो : 9027982074
ईमेल wajidhusain963@gmail.com

वह नीली शर्ट वाला आदमी

आज मेरा आख़िरी पेपर था। और आज से ठीक दस दिन बाद मेरा 18वां जन्मदिन है। यानी की दस दिन बाद मैं वोट देने लायक हो जाउंगी - देश का भविष्य तय करने वाली एक ज़िम्मेदार नागरिक। सोचकर अजीब सा लगता है। अपना स्वयं का भविष्य धुंध में डूबा धुंधला- सा दिखाई पड़ता है, पर मैं देश के भविष्य को देखकर बड़े सपने देखने लगती हूं। जून की उमस भरी गर्मी, बिजली की कटौती, धुआं उगलते वाहन और मोहल्ले के नुक्कड़ पर शोहदों की भीड़ -सबको बदलना है।

ओह कितने काम! वैसे धुंधला- सा दिखने वाला मेरा यह भविष्य मम्मी पापा के हिसाब से बिल्कुल साफ है। मालती, बाइस की होते ही शादी और फिर उसके बाद वही सब जो शादी के बाद होता है। कैसी आस्था है मुझे भविष्य के सपनों पर जैसे कुछ भी गलत, कुछ भी जो हृदय को तोड़ता है और वह मेरे साथ घटित नहीं होगा। कभी भी नहीं?

टैगोर का गीतांजलि का यह अंश बहुत गहरे तक रचा बसा है। "व्हेयर द माइंड इस विदाऊट फियर एंड द हेड इस हैल्ड हाई।" पर सच्चाई यह थी कि शाम साढ़े सात तक घर लौटने का अनिवार्य नियम मेरे लिए अठारह की होने के बाद भी नहीं बदलेगा। यानी अठारह बरस का होना एक मानसिक संतोष भर है।

उस दिन ग्रेजुएशन सेरेमनी के बाद हम आठ दोस्तों ने निश्चय किया कि नई फिल्म देखी जाए । शो हाउसफुल था। टिकट खिड़की पर खड़े आदमी ने इशारा किया- "मैडम, टिकट ख़त्म। देखना है तो नीली शर्ट वाले से ले लीजिए... ब्लैक में।"

नीली शर्ट वाला एक दुबला पतला आदमी था। होठों से सिगरेट के छल्ले निकालता हुआ, आत्मविश्वास से खड़ा। उसके इशारे पर एक नाटे क़द का आदमी लोगों को ब्लैक में टिकट थमा रहा था।

मैं झिझकते हुए भीड़ में खड़ी हो गई। पहली बार ब्लैक में टिकट लेने जा रही थी। हिम्मत जुटाकर बोली, "भैया... आठ टिकट चाहिए।"

उसने सिगरेट बूझाकर मेरी ओर देखा। चेहरा गंभीर, पर आंखों में एक अजीब नरमी। उसने नाटे आदमी से कहा -"आठ टिकट दे दो... रेगुलर रेट पर।"

मुझे बुरा लगा। क्यों मेहरबानी कर रहा है मुझ पर? कहीं मेरे गुलाबी दुपट्टे का असर तो नहीं? मैंने बिना कुछ कहे ब्लैक का पूरा पैसा थमा दिया।

वह चौका, मुस्कुराया और बोला -"आप पहली बार ब्लैक में टिकट खरीद रही है, है ना?"

मैंने चुपचाप सिर हिलाया।

वह आसमान की ओर देखते हुए धीमें स्वर में बोला -"तो मैं वह पहला आदमी नहीं बनना चाहता जो आपके जीवन में बेईमानी की नींव रखे।"

उसने नाटे आदमी से मेरे पैसे वापस कराए और चला गया।

मैं स्तब्ध खड़ी रह गई थी।

उस दिन की वह घटना मेरे व्यक्तित्व पर एक फौलादी छाप छोड़ गई।

दस साल बाद...

आज मैं अट्ठाइस की होने वाली हूं। अठारह मैं जोश था, अब हक़ीक़त है। देश बदलने के सपने कहीं खो गए हैं। सरकारी दफ्तरों की धूल, बाबूओं की रिश्वत खोरी, सिस्टम की सुस्ती... सब देखकर थक गई हूं।

वह नीली शर्ट -बार याद आता है -पर वह चेहरा बार वाला। जिसने ब्लैक में टिकट बेचते हुए भी मुझे ईमान का सबक दिया।

कुछ महीने पहले की बात है। दिल्ली में एक एनजीओ के प्रोग्राम में गई थी। वहां एक वक्ता मंच पर खड़ा था- तेज़ आवाज़, सुलझे हुए विचार और सीधी बातें। उसने कहा- "देश बदलना है तो सबसे पहले अपनी आत्मा को ईमानदार बनाइए। झूठ, लालच और बेईमानी से छुटकारा पाए बिना क्रांति अधूरी है।"

मैं चौंक गई। वही चेहरा! उम्र का असर था, पर पहचान में देर नहीं लगी। वही नीली शर्ट वाला।

प्रोग्राम ख़त्म होने पर मैं उसके पास गई।"आप... ब्लैक में टिकट बेचते थे, है ना?"

वह हल्के से हंसा, "हां... पेट की मजबूरी थी। पर उस दिन आपने मेरी जिंदगी बदल दी।"

मैं अचंभित थी- "मैंने?"

"हां। जब आपने ब्लैक का पैसा देने समय मेरी आंखों में सीधा देखा... तब मुझे लगा कि मैं गलत कर रहा

हूं। मैंने तुरंत आपका पैसा लौटा दिया और उसी दिन क़सम खाई थी -अब ईमान से कमाऊंगा, चाहे भूखा रहना पड़े।"

मेरी आंखें नम हो गई। जिस आदमी को मैंने बेईमान समझा था, वहीं अब लोगों को ईमानदारी का पाठ पढ़ा रहा था।

वह आगे झुक कर बोला -"किसी ने आपको मालती कहकर पुकारा था। इस तरह मैं उस इंसान का नाम जान गया जिसने मुझे नई राह दिखाई। तो मालती जी, कभी-कभी एक छोटी सी मुलाकात, एक सही निर्णय -किसी की पूरी ज़िंदगी बदल सकता है।"

उसकी बातों में मुझे भीतर तक हिला दिया। मैंने सोचा, शायद यही वह संकेत था जिसकी मुझे तलाश थी। दुनिया बदलने के लिए बड़े मंच नहीं, छोटे छोटे क़दम चाहिए।

आज जब मैं अपने अट्ठाइसवें जन्मदिन की तैयारी कर रही हूं, तो मुझे लगता है कि वह नीली शर्ट वाला मुझे वह लौटा गया है जो मैंने सालों पहले खो दिया था - विश्वास।

,कभी जीवन में मिलने वाला सब से अनपेक्षित इंसान हमें वह सबक दे जाता है-कभीजो वर्षों की किताबें भी नहीं दे पाती। और वही सबक किसी और की जिंदगी बदलने का कारण बन जाता है।

लघुकथा

डॉ. चंद्रेश कुमार छतलानी

उदयपुर (राजस्थान)

बॉस इज़ ऑलवेज़ राइट

एक राजा था. प्रजा भी उससे खुश थी. सभी को यह विश्वास था कि राजा जो भी कहता है वह उनकी भलाई के लिए ही है, वे सभी राजा की बात मान भी लेते. इस कारण राजा को कभी सख्ती भी नहीं करनी पड़ती थी.

एक दिन उसके राज्य में दूसरे खुशहाल राज्य का एक शिक्षित आदमी आया. उसने वहाँ पर ज़मीन खरीदी और एक विद्यालय की नींव रखी. जैसे ही राजा को यह पता चला, उसने उस आदमी को अपने पास बुलाया और पूछा, "आप क्या करने जा रहे हैं? यह कार्य मेरी प्रजा के हित में है या नहीं, मैं यह जानना चाहता हूँ."

उस आदमी ने विद्यालय की पूरी योजना का दस्तावेज राजा को दिया. राजा ने उसे बड़े मनोयोग से पढ़ा और फिर कहा, "यह योजना आप मेरे राज्य में लागू नहीं कर सकते. मैं स्वीकृती नहीं दे सकता."

वह व्यक्ति चौंक कर बोला, "क्यों!? इस विद्यालय में पढ़ने के बाद आपकी प्रजा बेहतर शिक्षित हो जाएगी, उनमें हर बात को सोचने और विचारने की दृष्टि उत्पन्न हो जाएगी."

"यही तो मैं नहीं चाहता." राजा चीखते हुए बोला, "क्योंकि... तब मेरी बात कौन मानेगा?

राजा चीख रहा था, लेकिन उसकी चीख दरवाज़े से बाहर तक नहीं जा सकती थी. उसके पुरखों से लेकर कई पीढ़ियों के वंशजों तक की यह भी एक राजाज्ञा थी. और आज भी है.

अशोक आनन

शाजापुर (म.प्र.)

कल के सपने

वे बाज़ार गये । सब्जियों के भाव सुन , वे सब्जी खरीदने की हिम्मत न जुटा पाये .....और बग़ैर सब्जी खरीदे ही , घर लौट आये ।

ख़ाली झोला देख , मीरा ने जब उनसे सब्जी न लाने का कारण पूछा तो वे बड़ी सहजता से बोले , ' मीरा ! कुछ दिन यदि हम फल - सब्जियां नहीं खायेंगे तो मर थोड़े जायेंगे । हम फल - सब्जियां खा - खाकर ही तो बड़े हुए हैं । इनसे जो पैसा बचेगा , उससे रीता का मोबाइल रिचाॅर्ज हो जायेगा । तुम तो जानती ही हो कि आजकल उसकी ऑन लाइन क्लासेज़ जो चल रही है । यदि वह पढ़ - लिखकर कुछ बन गई तो हमारे सारे सपने साकार हो जायेंगे ..... और उस दिन हम नहीं , वह हमारे लिए फल - सब्जियां लेकर आयेगी । '

' भगवान करे....., वह शुभ दिन जल्द ही हमारे जीवन में आये । ' और मीरा उनकी बातों से सहमत होते हुए , लहसुन की चटनी पीसने में व्यस्त हो गई ।

अब दोनों के चेहरों पर संतुष्टि के भाव स्पष्ट नज़र आ रहे थे ।

कहानी

शीला मिश्रा
भोपाल (म.प्र.)

खुशियों का द्वार

"मेरी बात का कुछ जवाब तो दीजिए ..?"मीता ने अनुनय पूर्वक कहा पर आनंद सिर झुकाए बैठा रहा। "बोलो न ...कुछ तो बोलो ..?"इस बार मीता ने आनंद का मुँह ऊपर उठाते हुए कहा।

"देखो मीता ..!इस विषय में मुझे तुमसे कोई बात नहीं करनी है।"

"पर आज मैं सब कुछ जानकर रहूंँगी ,नहीं तो घर नहीं जाऊंँगी।" मीता ने प्यार में ठुनकते हुए कहा। यह सुनकर आनंद ने मीता की तरफ बहुत बेचारगी के साथ देखा फिर धीरे से बोला "सच सुनना चाहती हो न तो सुनो.. , मैं शादी करना ही नहीं चाहता।" आनंद ने कुछ रोष के साथ कहा।

"पर क्यों...... एक तरफ कहते हो तुम मेरी दोस्त हो और फिर दोस्त को पूरी बात भी नहीं बताते हो। आज तो कारण जाने बिना मुझे घर जाना ही नहीं है।"आज मीता हर हाल में कारण जानना चाहती थी।

आनंद ने मीता की तरफ ध्यान से देखा फिर एक लंबी सांस लेकर कहा "चलो मैं तुम्हें बता ही देता हूंँ, तुम्हें पता है मेरे मम्मी-पापा एक साल के लिए जेल में रहे हैं ...!"

"जेल में...क्यों ....?"

"बस वही तो बात है जिसके कारण में शादी करना नहीं चाहता।"

"अब पहेली मत बुझाओ...भला जेल का शादी से क्या संबंध....?"

"बहुत गहरा संबंध है..." आनंद ने सिर नीचे झुकाए हुए कहा फिर कुछ देर बाद सिर ऊपर उठाकर मीता की ओर देखते हुए दर्द भरे स्वर में कहा -"बहुत कड़वी याद है पर मैं तुम्हें इसलिए बता रहा हूंँ ताकि तुम फिर कभी शादी के लिए जिद न करो.... तुम्हें पता है मेरे भाई की शादी आज से छह साल पहले हुई थी। अच्छा-खासा परिवार था। सब ठीक-ठाक चल रहा था। शादी के सात-आठ महीने होते-होते भाभी और भैया में बहुत लड़ाई होने लगी और एक दिन भाभी नाराज होकर अपने मायके चली गईं और मेरे मम्मी-पापा तथा भैया पर दहेज उत्पीड़न का आरोप लगा दिया। तुम्हें तो पता है उस समय कानून ऐसा था कि साल भर के अंदर अगर पत्नी मारपीट या इस तरह का कोई इल्जाम लगाए तो उसकी बात को बहुत गंभीरता से लिया जाता था, कोई सुनवाई नहीं होती थी बस शाम तक पुलिस आई , मेरे मम्मी -पापा को पकड़ कर ले गई , उस समय भैया फैक्ट्री में था तो उनके पास किसी ने खबर पहुंचा दी चूँकि उसके नाम का भी वारंट था तो उसी समय वह वहांँ से भाग गया और पता है पूरे दो महीने छिपते-छिपाते वह यहांँ-वहांँ घूमता रहा , दर-दर की ठोकरें खाता रहा। हमारे किसी परिचित के घर या किसी रिश्तेदार के यहाँ जा नहीं सकता था। एक हमारे पुराने पड़ोसी थे, जिनसे हमारे घरेलू संबंध अभी तक हैं , जिन्हें हम मामा कहते हैं , उनके यहांँ जाकर वह कुछ दिन छिपा रहा , उसकी नौकरी तो छूट ही गई थी । मैं उस समय कॉलेज में था, मेरा भी पढ़ाई से मन उचट गया था। मैं यहांँ -वहांँ सहायता के लिए भटकता रहता। कभी वकील के पास जाता कभी थाने के चक्कर लगाता तो कभी रिश्तेदारों के घर मदद माँगने जाता। मैं टूट गया था एकदम..... मीता.... मैं एकदम टूट गया था। वह तो वकील अच्छा था कि मेरे मम्मी-पापा छह महीने में ही छूटकर घर आ गए लेकिन...., वे दोनों पहले जैसे कहांँ रह पाए थे। इन छह महीने में ऐसा लगा मानो वे छह साल जी गए हों, दोनों के चेहरे पर बुढ़ापा नजर आने लगा था, बीमार दिखने लगे थे, एकदम असहाय-से कृषकाय हो गए थे। उनकी दयनीय अवस्था देखकर मेरा पढ़ाई में मन नहीं लगता था। उधर भैया का कहीं अता-पता नहीं था। हमारा पूरा घर बिखर गया था केवल भाभी के स्वभाव के कारण....... । जबकि तुम्हें बताऊँ.... मम्मी तो भाभी को सिर आँखों पर रखतीं थीं , काम के लिए तो उन्हें कभी कहा ही नही। सुबह की चाय से लेकर रात का खाना तक मम्मी स्वयं बनाती थीं पर पता नहीं क्या स्वभाव था भाभी का..., भैया से लड़ाई होती तो गुस्सा पूरे घर पर निकालतीं और रो-धोकर मायके चल देतीं , भैया ही मनाकर वापिस लाते लेकिन ऐसा लगता था कि शायद उनके मायके वाले उनको गलत सीख देकर ही भेजते क्योंकि धीरे-धीरे भैया डरे-सहमे से रहने लगे थे और तो और ....भाभी बात-बात पर पुलिस की धमकी भी देने लगीं थीं। उनके पिताजी राजनीति में सक्रिय थे तो रसूखदारों से व पुलिस में उनकी अच्छी पहचान थी । बस.....उसी का फायदा उठाया। " इतना कहकर आनंद ने लंबी साँस ली।

"फिर मामला सुलझा कैसे ? अभी भी अटका हुआ है क्या ?" मीता ने चिंतित स्वर में पूछा।

"नहीं ...,अब सब सुलझ गया है पर वे जिल्लत भरे दिन हमलोग कभी नहीं भूल सकते। मम्मी-पापा घर से बाहर नहीं निकलते थे , भैया की नौकरी छूट गई थी,

आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो रही थी आखिरकार हम लोग इंदौर को छोड़कर पंजाब आ गए। नाना की जमीन थी, उसी पर खेती कर किसी तरह घर का खर्चा निकल रहा था। मैंने कॉलेज में एडमिशन तो ले लिया पर मेरा पढ़ाई में मन नहीं लगता था फिर एक साल बाद लड़की वालों ने केस वापस ले लिया। जर्जर आर्थिक स्थिति को देखते हुए भैया ने उसी फैक्ट्री में नौकरी का आवेदन दिया ,नौकरी मिल भी गई। मजबूरी और बेबसी क्या नहीं कराती मीता... । भैया बहुत बेमन से इंदौर गये। हर दो तीन महीने में वे मम्मी-पापा से मिलने आते।उनकी शारीरिक स्थिति देखकर बहुत दुख होता। मुझसे लिपटकर वे फूट-फूटकर रोते। उनके मन में यही फाँस टीसती कि मेरे कारण मेरे माता-पिता ने इतना कष्ट सहा, उनको यह दिन देखना पड़े। पता नहीं वहांँ कैसे लड़की वालों को पता चल गया कि भैया इंदौर में हैं। वे भैया से मिलने आने लगे और धीरे-धीरे पता नहीं भैया को क्या होता गया या तो उन्हें डर दिखाया गया या धमकाया गया ,हम नहीं जानते परन्तु भैया उनलोगों की बातों में आ गये या हो सकता है कि अकेलेपन व घुटन के काले बादलों से आच्छन्न उनका मन प्यार की झूठी फुहार से बहल गया , नहीं कह सकता ...पर वे भाभी को वापिस ले आये और साथ में रहने लगे। उन्होंने इस संबंध में हमलोगों को सूचित भी किया लेकिन हममें से कोई भी अब भाभी का चेहरा तक देखना नहीं चाहता था। सच तो यह है न कि , 'जहांँ गांठ वहांँ रस नहीं ' , इसलिए मम्मी-पापा वहांँ नहीं गए। अभी पिछली दीवाली पर भैया ,भाभी को लेकर आये थे। उनकी एक छोटी-सी बेटी भी है। वे सब चार दिन साथ में रहे पर पता नहीं क्यों मीता....! सबके मन में कल-कल बहता स्नेह का सोता सूख गया है। तुम समझ रही हो न मीता ..., बस इसीलिए मैं मम्मी-पापा को दुखी नहीं करना चाहता। मैं उन दोनों की सेवा करना चाहता हूँ। मैं नहीं चाहता कि मेरी शादी के बाद भी ऐसा कुछ हो जाये कि उन्हें दुख झेलना पड़े।" इतना कहकर उसने भीगी आंँखों से मीता की ओर देखा।

"मैं तुम्हें इस तरह की लगती हूंँ क्या..जो उन्हें दुख दूंँगी ?" मीता ने मायूसी के साथ कहा।

" देखो ! बुरा मत मानो ..दूध का जला छाछ भी फूँककर पीता है। है न...! मैं तुम पर कोई शक नहीं कर रहा किन्तु कल्पना करो कि तुम्हारी मेरी मम्मी-पापा से पटरी नहीं बैठी तो मैं उन दोनों के साथ-साथ तुम्हारे साथ भी न्याय नहीं कर पाऊँगा। " फिर मीता के सामने हाथ जोड़कर बोला -"मेरे माता-पिता केवल स्नेह के हकदार हैं मीता....केवल स्नेह के " इतना कहकर आनंद फफक पड़ा।

मीता आनंद की मन:स्थिति भली-भांति समझ रही थी। उसने आनंद का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा -" मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ कि मेरी किसी बात से उन्हें कभी ठेस नहीं पहुँचेगी। "

"मैं केवल मम्मी-पापा की सेवा करना चाहता हूँ.... उन्हें खुश रखना चाहता हूँ...तुम...तुम मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो मीता प्लीज़.......!" करुण स्वर में कहे गये इन शब्दों से मीता भी भावुक हो उठी और आनंद की पीठ को सहलाकर वहाँ से निकल आई।

मीता घर आ गई। अगले दो दिन छुट्टी थी। तीसरे दिन वह ऑफिस के लिए निकलने ही वाली थी अचानक उसकी अमेरिका वाली सोनू बुआ आ गई , उन्हें यूँ सामने देख वह खुशी से "बुआ...." कहती हुई उनसे लिपट गई। उसके हर्षित स्वर को सुन घर के सभी सदस्य दरवाजे की तरफ भागे-भागे आये। सबकी आँखों में एक ही प्रश्न कि "अमेरिका से यूँ अचानक कैसे आ गईं बुआ ?"

"अरे ..!सब ऐसे आश्चर्य से क्यों देख रहे हो , मैंने तो बताया था न कि देवर की शादी में मुझे पहले भोपाल जाना है फिर बाद में यहांँ आऊँगी परन्तु ठंड की वजह से फ्लाइट कैंसिल हो गई तो मैंने सोचा कि पहले आपलोगों से ही मिल लेते हैं। इसलिए टैक्सी करके यहांँ आ गई ,अब दो दिन बाद भोपाल जाऊँगी।" इतना कहकर सोनू बुआ, मांँ से लिपट गई।

मीता ने अपना ऑफिस जाना कैंसिल किया और फोन पर बॉस को सूचित कर दिया। बुआ के साथ बातें करते ,उनकी खरीदारी कराते दो दिन फुर्र से बीत गये । रात का खाना खाकर बुआ मीता का हाथ पकड़कर छत पर आ गई और बिना किसी भूमिका के पूछा -"अब तुम बताओ , कब कर रही हो शादी ?"

क्या जवाब देती मीता .....कुछ बोलने के लिए मुँह खोलने ही वाली थी कि बुआ ने तपाक् से कहा -"कोई पसंद हो तो बता दो, भैया से मैं बात कर लूँगी।"

मीता के मुख पर आई लालिमा ने सच को उद्घाटित कर ही दिया ।

"अच्छा बता ...! कौन है?"

अब मीता चुप नहीं रह पाई। आनंद के साथ दोस्ती, उस दिन हुई बातचीत और अपने मन में उसके प्रति आकर्षण... सब कुछ कह डाला बुआ से।

कुछ देर खामोश रहने के बाद बुआ ने मीता के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा -"देखो मीता! वह चोट खाया हुआ इंसान है। उसे प्यार की जरूरत है ,सहलाने की जरूरत है। तुम अगर उसके मन को पूर्णतया समझ सकती हो तथा उसकी पीड़ा को सहला सकती हो, तब तो आगे बढ़ो... नहीं तो तुम पीछे हट जाओ।"

यह सुनते ही मीता अचरज से बोली -"बुआ आप कैसी बातें कर रही हैं..., मैं... मैं..आनंद से.."

उसके वाक्य पूरा होने के पहले ही बुआ बोली उठीं - "देखो बेटा ! सच यह है कि लड़कियां बहुत उम्मीद लेकर शादी करतीं हैं। वे सिर्फ सुख पाने की ,खुशियांँ मिलने की ही कामना करतीं हैं लेकिन नये रिश्ते में आरंभ से ही केवल खुशी मिले , ये संभव नहीं है। इसलिए तुम्हें समायोजन करना होगा , कुछ पाने की बजाय कुछ देने का भाव मन में रखना होगा ।ऐसा कर पाओगी तब तो इस रिश्ते में आगे बढ़ो। मेरी बात याद रखो कि जब हम खुशी देना सीख जाते हैं तभी खुशियाँ हमारा द्वार खटखटातीं हैं।

" इतना कहकर बुआ ,मीता के मन की थाह लेने के लिए अपलक उसे देखने लगीं।

"अपने प्यार को पाने के लिए इतना तो कर ही सकती हूँ। " यह कहते हुए उसके मुख पर एक अलग ही चमक थी, जो चाँद की किरणों से द्विगुणित हो रही थी ।

यह सुनकर बुआ ने मीता के कपोल पर हल्की सी चपत लगाते हुए कहा -"अब मैं भैया से बात करती हूँ। "

इतवार के दिन मीता अपने मम्मी-पापा के साथ आनंद के घर पहुंची। उसे अचानक मम्मी- पापा के साथ आया देख वह चौंक गया। कुछ संकोच के साथ उसने मेहमानों का स्वागत किया। परिचय की औपचारिकता के बाद मीता के पापा ने शादी की बात सामने रखी। आनंद व मीता एक ही ऑफिस में काम करते हैं तथा एक-दूसरे को पसंद करते हैं ,यह जानकर आनंद के मम्मी- पापा बहुत खुश हुए और सहर्ष शादी के लिए तैयार हो गये। विवाह की तिथि, रीति-रिवाज व तैयारी की बात करके जब मीता के मम्मी- पापा घर लौटने को हुए तो उन्होंने अपने समधी -समधन से हाथ जोड़ते हुए कहा -"मैं आपको विश्वास दिलाता हूंँ कि अब आपके आँगन में केवल खुशियों की ही बरसात होगी क्योंकि हम इस बात पर विश्वास रखते हैं कि खुशी देने से ही खुशी मिलती है।" पापा के इतना कहते ही मीता ने झुककर आनंद की मम्मी-पापा के पैर छुए और हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ी होकर बोली-"मुझ पर विश्वास रखिए, मैं आपदोनों की अपेक्षाओं पर निश्चित रुप से खरी उतरुंँगी।"

इतना स्नेह ,अपनत्व व विनम्रता देख उन दोनों के मन में जमे अपमान के काले बादलों का घनत्व छंटने लगा और उन्होंने मीता पर आशीर्वाद की झड़ी लगा दी।

दो साल बाद अपने नन्हें को दादी की गोदी में किलकारी मारते देख मीता के कानों में बुआ की बात गूंँजने लगी- " केवल खुशियाँ पाने की ही आकांक्षा नहीं होनी चाहिए बल्कि खुशी देना भी आना चाहिए, तभी खुशियांँ हमारा द्वार खटखटातीं हैं।"

सूचना (भूल सुधार)

जुलाई-सितंबर 2025 अंक में प्रकाशित **लंदन में महात्मा बुद्ध की अस्थियां-कहानी पिपरहवा स्तूप की** : कहानी /लेख को कृपया पेज 36 को हटा कर पढे ।

ताप हरो हे शिवशंकर

हे नीलकंठ हे त्रिलोचन ,भूत रूप भयंकर।
त्रिशूल धारी,डमरू प्यारे, ताप हरो हे शिवशंकर।।
जटाधारी भस्म भाल पर, जटा से गंगा बहती।
आपही कृपानिधान हैं,भोले भक्त सभी हैं कहते।।
रुद्र तुम्हीं और भोलेबाबा औघड़ रूप कहाए।
जब भी विपदा पड़ी भक्तों पर पल भर में निपटाए।।
भूतनाथ कैलाशनाथ, हे गंगाधर त्रिपुरारी।
याद करें सब भांग चढ़ाएं, नंदी हुए सवारी।।
जग के संहारक मेरे बाबा,धतूरा चढ़े निरंतर।
त्रिशूलधारी,डमरू प्यारा,ताप हरो हे शिवशंकर।।
है कैलाशधाम अति उत्तम,पार्वती संग विराजे।
मनमोहक है धाम निराला,भक्तों का मन लागे।
मिले अमर वरदान जहां, जाकर हे बाबा गंगाधर।
त्रिशूलधारी,डमरू प्यारा,ताप हरो हे शिवशंकर ।।
धरती डोले अम्बर डोले, रौद्र रूप जब धरते।
अपनी क्या औकात है बाबा, ऋषि मुनि देवता डरते।।
मूंद आंख तप करते हरदम,कृपा रखना बनाए।
मिल जाए जो कृपा तुम्हारी ,दुनिया का दुख मिट जाए।।
पिए हालाहल बने नीलकंठ,सर्प गले में विषधर।
त्रिशूलधारी डमरू प्यारा ताप हरो हे शिवशंकर।।
देव अघोरी मनुज दानव,सब कोई तुमको पूजे।
मन वांछित वरदान मिले,सबको खुश कर दीजै।।
एक था राक्षस भस्मासुर जो तप किया था भारी।
भूल गए सारी चिंताएं,वचन दिए त्रिपुरारी।।
हाथ रखे वो जिसके सर पर,जलकर भस्म हो जाए।
असुर वृत्ति के कारण,राक्षस शिव पर ही आजमाए।।
तीनों लोक भ्रमण कर डाले,विष्णु कृपा बचाए।
तांडव नृत्य बढ़ावे शोभा, भांग धतूरा चबाएं।।
बदन भभूत कमर मृगछाला,कर त्रिशूल विराजे।
जटा में गंगा नाग गले में, सिर पर शशि सजाए।।
रुद्राभिषेक देव की पूजा,दुग्ध बेलपत्र चढ़ाते।
पूज महादेव को अपना जीवन धन्य बनाते।।
हर बाधा से मुक्त करो प्रभु,प्रकाश पुंज हो अंदर।
जीव जगत के संहारकर्ता, ताप हरो हे शिवशंकर।।

विनोद कुमार वर्मा
गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

डॉ. सुरेश पुष्पाकर
ग्रेट ब्रिटेन

लघुकथा

टूटते पत्थर

सूरज अपनी सुनहरी किरणों से धरती को सहला रहा था। नदी के किनारे, एक विशाल शिला चुपचाप खड़ी थी—अडिग, अचल, समय की तमाम करवटों की साक्षी। वर्षों से वह वहाँ थी, धूप, बारिश, आँधी—सब सहती आई थी। उसके तन पर समय ने रेखाएँ खींच दी थीं, लेकिन उसकी दृढ़ता कभी नहीं टूटी थी।

किन्तु, धीरे-धीरे, प्रकृति का मूक कोलाहल उसके भीतर हलचल मचाने लगा। नदी की लहरें बार-बार उसके तल से टकरातीं, और हर बार, उसका एक छोटा अंश छिटक कर जल में विलीन हो जाता। पहली बार जब एक टुकड़ा टूटा, तो शिला ने इसे महज़ एक संयोग समझा। मगर यह सिलसिला थमने वाला नहीं था। लहरें आतीं, उसे सहलातीं, कभी थपेड़े मारतीं, और हर बार, एक नया टुकड़ा टूटकर बह जाता।

शिला चिंतित थी। वह सदा से यह मानती आई थी कि उसकी दृढ़ता ही उसका अस्तित्व है। लेकिन अब, जैसे-जैसे वह क्षीण हो रही थी, एक प्रश्न उसके भीतर जाग उठा—क्या टूटना विनाश है, या पुनर्निर्माण?

उसी किनारे पर एक वृद्ध साधु रहते थे। शांत, स्थिर, और समय के रहस्यों को समझने वाले। शिला ने हिम्मत जुटाई और पूछ लिया, "हे मुनिवर, मैं टूट रही हूँ। मैं तो अडिग थी, पर अब धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही हूँ। क्या यह मेरा अंत है?" साधु मुस्कुराए, उनकी आँखों में समय की गहरी समझ झलक रही थी। उन्होंने नदी की ओर इशारा किया और बोले, "देखो, यह पानी तुम्हें तोड़ रहा है, पर क्या यह स्वयं स्थिर है? यह भी तो बदल रहा है—कभी शांति से बहता है, कभी लहरों में उग्र हो उठता है, कभी बादल बनकर आकाश में उड़ जाता है। जो स्थिर है, वही मर जाता है। परिवर्तन ही जीवन है।"

शिला ने असमंजस में पूछा, "पर मैं तो ठोस हूँ, स्थिर हूँ, मेरा अस्तित्व मेरी दृढ़ता में है। यदि मैं टूट जाऊँ, तो फिर मैं क्या रह जाऊँगी?"

साधु ने एक छोटा-सा पत्थर उठाया और मुस्कुराकर बोले, "क्या तुम जानती हो, यह पत्थर भी कभी किसी विशाल शिला का हिस्सा रहा होगा? वह टूटा, लुढ़का, नदी में बहा, और धीरे-धीरे किसी मंदिर की मूर्ति बन गया। कोई पत्थर किसी राजा के महल की नींव बना, तो कोई भक्तों की पूजा का केंद्र। टूटना, बिखरना, समाप्त होना नहीं है—यह एक नए स्वरूप में ढलने की यात्रा है।"

शिला चुप हो गई। उसे याद आया कि कितने ही टूटे हुए पत्थर किनारों पर बिखरे हैं, जो किसी समय उसकी तरह विशाल और अडिग रहे होंगे। लेकिन वे समाप्त नहीं हुए—वे समय की धारा में कहीं और आकार पा गए।

धीरे-धीरे, वह समर्पण करने लगी। जब अगली लहर आई और एक और टुकड़ा ले गई, तो उसने कोई प्रतिरोध नहीं किया। उसे एहसास हुआ कि जो टूट रहा है, वह समाप्त नहीं हो रहा, बल्कि नया आकार ले रहा है।

सदियों बाद, उस स्थान पर एक सुंदर शिवलिंग प्रतिष्ठित किया गया। पुजारी जब उस पर जल चढ़ाते, तो वह वही नदी का जल होता जो कभी उस शिला को तोड़ता था।

शिला अब मंदिर का पवित्र पत्थर बन चुकी थी।

भगवती सक्सेना गौड़
बेंगलूरु

वक्त का पहिया

सीनियर सिटीजन रुचि आज पार्क में घूमते हुए अचानक गिर गयी। घुटने में आवाज़ के साथ दर्द बहुत हो रहा था, खड़ी नही हो पा रही थी। कुछ लोगो ने मोबाइल मांगकर उनके घर का पता पूछकर घर पहुँचाया। घरेलू दवाई बहू रीता ने लगाकर मालिश भी कर दी। पर रात भर में सूजन आ गयी और सुबह अपोलो हॉस्पिटल ले जाया गया।
वहां उसका आपरेशन हुआ और तीन महीने का प्लास्टर लगा, और दो दिन शुगर बीपी की देखभाल के लिए डॉक्टर ने एडमिट भी कर लिया। उसी के वार्ड में एक और महिला रोगी थी, जो बिस्तर पर ही लेटी रहती थी, आया, नर्स आकर पूरी तरह से सहायता करती थी।

दूसरे दिन वह रोगी सुबह बड़ी सुरीली आवाज में एक भजन गा रही थी, जो रुचि को कुछ सुना हुआ लग रहा था, बार बार उसे महसूस हो रहा था, इस महिला को कहीं देखा है, आवाज़ सुनी है।
फिर उसने नर्स को बुलाया, "ये कौन है, इनका नाम क्या है, इन्हें क्या हुआ है।"
"ये पचहत्तर वर्षीय पार्वती मैम हैं, जिस डॉक्टर ने आपका आपरेशन किया है, उनकी मम्मी है। इनको कुछ बीमारी नही है, एक एक्सीडेंट में इन्होंने पैर खो दिया, चल नही सकती, घर मे बहू, बच्चे हैं, पर किसी के पास समय नही है कि कोई इनको खाना दे, सेवा करे। कोई नौकर भी स्थायी नही मिलता। तो डॉक्टर साहब ने इनको यहां रख दिया। उनके पास भी बात करने का समय नही है। क्या करे, गाने गाकर अपना मन बहलाती है।"

रुचि की आंखों में आंसू थे, पंद्रह वर्ष पहले रुचि और पार्वती एक ही रेलवे की कॉलोनी में रहती थी, किट्टी पार्टी में संग जाती थी, तब पार्वती सब सखियों के बीच संगीत के मधुर स्वर के लिए विख्यात थी। वक्त का पहिया बड़े रुआब से रहने वाली पार्वती को कहाँ ले आया, हमेशा बताती थी, बेटा एमएस करने अमेरिका गया है। पार्वती और रुचि दोनों के पति रेलवे के ऑफिसर थे, पर अब दोनों ही स्वर्ग सिधार गए। रुचि अपने बेटे बहू के साथ मेट्रो सिटी में रहती थी, आज भी ढेरों संखियाँ थी।

तभी अचानक पार्वती ने ध्यान से रुचि को देखा, "बहन तुम्हारा नाम क्या है? पैर में प्लास्टर क्यों लगा है, चलो मुझे कोई सखी मिल गयी , अब हम दोनों मिलकर गाने गाया करेंगे...आज रपट जाए तो हमें न उठाइयों।"
उनकी बातें सुनकर रुचि रो पड़ी और बोल उठी, "तुमने शायद पहचाना नहीं, पर मैं तुम्हे जानती हूं, तुम पार्वती शर्मा हो।"
"सखी समझ तो गई थी पर अपनी दीन हीन अवस्था कैसे तुम्हे बतलाती। मैं असहाय हूँ, अपंग बुजुर्ग परिवार के लिए बोझ ही रहता है।"

तभी रुचि का बेटा उसे घर ले जाने के लिए पहुँच गया।
रुचि ने पार्वती से कहा, "तुम घबराना नहीं, मैं बेटे की सहायता से यहां आती रहूंगी, मुझे पुरानी सखी मिली है, तुम्हे छोडूंगी नहीं।"

वो समझ गयी वृद्धाश्रम का विकल्प बनाकर बेटे ने पार्वती को यहाँ रख दिया।

लघुकथा

दीपक कुमार

चालीस पार

लछमी का बेटा अब जवान हो गया है। अब उसे मरद का कोई डर नहीं। जवानी के दिनों में वह मार खाई है। गाली-गलौज तो जैसे उसकी जिंदगी का अभिन्न हिस्सा था। सुबह नींद खुलने से लेकर रात को सोने तक हर बात में वह गाली सुनती थी। वह भूल गई थी कि उसका नाम लछमी है। उसको लगने लगा था कि उसका नाम ही है 'साली'।

अब वह चालीस साल की है और उसका बेटा मोहन बीस का। जवानी के दिनों में उसका मरद जब उसे गरिया - वरिया के काम पर जाता था तब वह पहला काम करती थी कि घर का वह हर सामान छुपाती थी जिससे उसको मार पड़ सकती थी। उसको मालूम था कि बिना मारे उसका मरद मुँह-हाथ भी नहीं धोएगा। चोट ज्यादा न लग जाए इसके लिए डंडों को छुपाना जरूरी होता था।

अब वही डंडे उसका मरद छुपाता है। बेटे मोहन ने एक बार बाप का कपार फोड़ डाला था। हुआ यह था कि चनरदेव ने जैसे ही लछमी को मारना शुरू किया, बीच में बेटा मोहन आ गया और उसके हाथ से डंडा छीन कर उसी पर प्रहार कर दिया। तब से डंडा छिपाने की बारी चनरदेव की हो गई। वह समझ गया था कि युग बदल गया है। औलाद का झुकाव माँ की तरफ ज्यादा होता है। तेरह साल की उमर में लछमी का ब्याह चनरदेव से हो गया था। गोटी खेलने वाली छोरी अचानक से एक दिन दुल्हन बन गई और साल भर बाद ही माँ भी। बयाह के बाद धीरे-धीरे जैसे हर स्त्री का हाल हो जाता है वैसा ही लछमी का भी हुआ। गाली और मार की आदी हो गई वह। जब भी चनरदेव को आने में देर होती, वह समझ जाती थी कि आज पीकर आएगा और मारेगा। चोट लगने वाली वस्तुओं को छिपाकर वह अपने दर्द को कम करना चाहती थी। लेकिन जिस दिन उसके बेटे मोहन ने बाप की कपाड़ फोड़ डाली, लछमी को एहसास हुआ कि वह अकेली नहीं है। मरद के माथे से खून बह रहा था। लछमी का नारी हृदय पिघल उठा और चुनरी का कोरा फाड़ कर खून बंद करने में लग गई। ऊपर से दिखाना नहीं चाहती थी पर एक अनजान सा सुकून मन में था कि अब वह मार नहीं खाएगी। उसकी रक्षा उसका बेटा मोहन करेगा।

बेटा से मार खाने के बाद चनरदेव बदल सा गया था। एक दिन बेटे के लिए रिश्ता आया तो उसने कह दिया मालकिन उसकी माँ है। खैर बेटे की शादी हुई। रिश्तेदारों से लेन-देन की बात भी लछमी ने की। घर में बहू के आने के बाद चनरदेव और बदल गया। अब वह ओसारे में सोता था। कभी-कभार जब उसका मन लछमी से मिलने को होता थि तो इशारा करता था, वह ओसारे में आके उसका सिर-पैर दबा कर चली जाती थी। इससे पहले कि चनरदेव कुछ पहल करता, वह उठ जाती थी कह कर कि घर में पतोहू है।

बहुत दिन हो गये। लछमी को न मार पडी न गाली। शांत माहौल देखकर पड़ोस भी हैरान थे।

एक दिन मुहल्ल की काकी ने लछमी से कहा - 'लगता है चनरदेव आजकल सुधर गया है। तुमसे लड़ता-झगड़ता नहीं।'

लछमी ने जवाब दिया - 'बचपन से तेरह साल तक बाप-भाई की सहती रही, ब्याह के बाद मरद की। अब क्या उमर भर सहते रहेंगे। बेटा जवान हो गया है। घर में पतोहू आ चुकी है। उमर चालीस पार की हो गई। सहने की बारी अब मेरे मरद की है। एकबार मुझे हाथ लगाकर तो देखे, बेटा मेरा फाड़ कर रख देगा।

लघुकथा

संजय मृदुल
रायपुर

दो बेटे

क्या बताएँ भाई साब। अमेरिका जैसा तो कोई देश नही। कैसी कैसी सुविधाएं देखने लायक ऐसी जगहें जो हम यहां सोच भी नही सकते। खुले विचार वाले मिलनसार लोग। और बहू तो मत पूछिए ऐसी सेवा की उसने कि तृप्त हो गया अन्तस्।
विमल अमेरिका घूम कर आये थे तीन महीने बड़े बेटे के पास उसका गुणगान कर रहे थे पिछले दो घण्टे से अनवरत। दो बार चाय हो चुकी थी नाश्ता भी लेकिन उनकी बातें थी कि खत्म ही नही हो रही थी। छोटी बहू बिना शिकायत सेवा में लगी थी। शाम हो गयी थी बच्चो के पढ़ाई का समय था फिर भी वह मुस्कुराते हुए लगी थी।
क्या बताएं भाई साब बडके ने तो जैसे झूले पर रखा पांव नही रखने दिया जमीन पर। और बहू तो न पूछिये हर चीज हमारी पसन्द की एक दिन भजन मंडली बुलवा दी तो मंदिर भी ले गयी। पोते के होने के बाद सत्यनारायण की कथा भी कराई। आते समय इतना सारा गिफ्ट भी। ऐसा लग रहा भाई साब की जीवन भर की तपस्या फलीभूत हो गयी।
विमल मेरा छोटा भाई है उसके दो बेटे हैं। बड़ा इंजीनियर है और पिछले कई साल से अमेरिका में सेटल हो गया है। नागरिकता भी मिल गयी है अब तो। और इंजीनियर तो छोटा भी है बल्कि कहूँ तो बडके से होशियार भी और काबिल भी। पढ़ाई पूरी कर नॉकरी भी की कुछ साल। फिर विमल रिटायर हुए तो उसे लगा कि अब समय है माँ बाप के साथ रहने का। और नौकरी छोड़कर उसने अपने शहर में एक छोटी सी फेक्ट्री डाल ली। ईश्वर की कृपा से अच्छी चलती है वह।
पूरे सम्मान के साथ माँ पिता की सेवा में लगा रहता है बहू भी उतनी ही सुशील और समझदार। कभी जोर की आवाज नही सुनी किसी ने उसकी। हमारे घर आजू बाजू है न तो एक दूसरे के घर की हर बात पता रहती है।
हमे हमेशा लगता है कि ऐसी बहू हमारी भी होती लेकिन हम बस एक बेटी के पिता। वो भी अपने घर परिवार में सुखी। ओहो लो कहाँ की बात कहां चली गयी। बडके की बात तारीफ सुन सुन छोटी बहू के चेहरे के भाव बदल रहे थे जिसे वह मुश्किल से जब्त किए हुए थी। सही भी है जब जब घर मे बड़े बेटे की जरूरत पड़ी उसने कोई न कोई कारण बना कर आना टाल दिया और अब जब एक बार माँ बाबूजी को अमेरिका की सैर क्या करा दी वो उसी के गुणगान किये जा रहे हैं। मैं उसका चेहरा और मनोभाव पढ़े जा रहा था।

अंत मे रहा नही गया तो मैं बोल पड़ा। विमल इतने साल से देख रहा हूँ। बडके ने क्या किया क्या नही और छोटे ने क्या किया क्या नही। कुछ महीनों की सेवा की इस कदर तारीफ और छोटा जो अपना भविष्य तुम से जोड़कर यहां है हर सुख दुख में खड़ा हुआ बिना किसी शिकायत। बिना किसी स्वार्थ के उसका क्या। उसकी या बहू की तो कभी कोई तारीफ नही की तुम ने। क्या जो बाहर या विदेश में रहता है वही लायक होता है विमल।
एक कहावत है न
घर का जोगी जोगड़ा आन गांव का सिद्ध।
है न।
विमल अकबकाये भाव से मेरा चेहरा देख रहा था और छोटी बहू के चेहरे पर स्मित सी मुस्कान खिल गयी थी।

राजकुमार कुम्भज की कविताएँ...

331, जवाहरमार्ग, इंदौर- 452002
फ़ोन: 0731-2543380

बीमारी नहीं है छींकना

बीमारी नहीं है छींकना
एक लोकतांत्रिक कार्रवाई है अप्रत्यक्षत:
हत्यारा वह जो निकालता है छुरे-चाकू
निश्छल-निर्जल-निराहार मेमनों के विरुद्ध
विरुद्ध उसके छींकने में चाहिए साहस
पेट में संसार,सिर पर संस्कार लिए
जँगल से काट लाने को लकड़ियां
रफ़्ता-रफ़्ता गुज़रती हैं स्त्रियां
जागता ही कौन है, झाकता ही कौन है तब
जागै तो जागै कबीरा जागै और रोवै
नानक दुखिया सब संसार कोने-कोने
जागत है सो पावत है,मगर कौन
सोवत है सो खोवत है, अजगर सम
हाथी की नाक में घुसती है चींटी
छोटी है मगर सिखाती है पाठ बड़ा
इसी तरह कुछ इसी तरह, कुछ-कुछ मैं
सीखता हूँ सिखाता हूँ छींकना फिर-फिर
जैसेकि कहाँ – कहाँ होना है ज़रुरी छींक
बीमारी नहीं है छींकना.

साहिब-ए-मसनद हैं जो अभी

साहिब-ए-मसनद हैं जो अभी
क्या कुछ जानते नहीं हैं वे ये बात ज़रा-सी
कि सीढ़ियां जो ले जाती हैं ऊपर
ले आती हैं नीचे भी वे ही कभी-कभी
हथियार नहीं होते हैं शिखर,नहीं,कभी नहीं
हाथ और हौंसले ही होते हैं निर्माता
वे ही रचते हैं मिट्टी से घर और घर में खुशबू
छूते हैं,छूते ही हैं आसमान के पार तक
और देखते हैं फिर-फिर फूलों का खिलना
बच्चों की निर्मलता देखते हैं वे ही
बहती नदियों का वे ही देखते हैं बहना
जँगलॅ-जँगल कुलांचे भरते मृगछौने,
बांसुरी बजाते गडेरियों की टोली के इर्द-गिर्द
नृत्य-गान करती अर्द्ध-नग्न स्त्रियों को भी
देखते हैं,वे ही देखते हैं फिर-फिर
और जागते रहते हैं दिन-रात कोशिशों में
सोते नहीं हैं सपनों के लिए तान खूंटी
जैसेकि ओढ़कर कंबल हो जाते हैं साहिब
क्या कुछ जानते नहीं हैं वे ये बात ज़रा-सी

सच्चे आँसू,सच्ची मुस्कान

देखूं   अंततः देखूं कहां कहाँ तक
कितने नक़ली हैं आँसू और मुस्कान
अब तो एक व्यापार है ये भी सबका सब
आँखें देखती हैं तो देखती हैं कहीं और
जबकि वे चुभती हैं तो चुभती हैं कहीं और
बिस्तर बां धता है कोई, बिछाता है कोई और
बीच में कठिनाइयों की खाइयां -खंदकें
जानते हैं,समझते भी हैं सभी के सभी धूर्त
फिर भी करते ही रहते हैं नज़रअंदाज़
खिलखिलाते हैं तो मुरझाते भी हैं गुलाब
सदा-सदा रहती नहीं है सदाबहार चीज़ें
न तो चांदनी ही,न तो धूप की निरंतरता ही
जो बढ़ता है,घटता भी है दिन से रात तक
औक़ात ही क्या है आँसू और मुस्कान की
नक़ली है आदमी,नक़ली है मकान-दुकान
और मैं ढूंढता हूं लय-विलय करते हुए
सच्चे आँसू सच्ची मुस्कान.

आत्मनिरीक्षण-आत्मपरीक्षण

आत्मनिरीक्षण,आत्मपरीक्षण
बार-बार और निरंतर करता हूं मैं
मगर नहीं कुछ भी आत्माताप बग़ैर
टकराता हूं फिर-फिर टकराता हूं मैं ही
दीवारों से,दरारों से,पत्थर और मीनारों से
संघर्ष बड़ा है,वह जो कि यहीं-कहीं खड़ा है
ऐसे में ही हुआ जाता है ज़रुरी प्रेम-पाठ
लिए लुकाठी अपने हाथ चला मुसाफ़िर
रोटी-पानी-नमक-ताप की तलाश लिए
रूखा-सूखा खाता हुआ,गाता हुआ दु:ख
कोसता हुआ खुद के होने को फिर-फिर
कहाँ नहीं है जीवन कायरता ढूंढे हर बंदा
बचा नहीं है,शब्दों में कुछ बचा नहीं है
कि खिलखिलाये फिर सच-सच जैसा कुछ
आँसू-आँसू खारा है और कुछ कम-कम भी
धूप-चांदनी ढूंढ रहा हूं मैं आते-जाते
ख़ुद को देखूं ,नित-नित देखूं , इत-उत देखूं
कैसे,कितना कुछ याद करूं , कुछ याद नहीं
पत्थर चेहरा,पत्थर मोहरा,
पत्थर पहरा आत्मनिरीक्षण-आत्मपरीक्षण.

तारकेश्वरी 'सुधि'

जयपुर

कुंडलियाँ

आई थी जो राह में, बाधाओं की भीड़।
चिड़िया उनको पारकर, पहुँची अपने नीड़।।
पहुँची अपने नीड़, देख कर बच्चे चहके।
था आनन्द अपार, कष्ट बहुतेरे सह के।
कहती है सुधि सत्य, गिद्ध ने मुँह की खाई।
निज साहस से सिर्फ, नीड़ तक चिड़िया आई।।

तन से हैं छोटी मगर, धैर्य, एकता खास।
अपने श्रम पर चीटियाँ, करती है विश्वास।।
करती हैं विश्वास, निरन्तर आगे बढ़तीं।
मन मे हिम्मत बाँध, शिखर के ऊपर चढ़तीं।
कहती है 'सुधि' सत्य, सफलता पाते मन से।
यदि वह ही श्रमहीन, मिलेगा क्या फिर तन से?

बात बिगड़ती हो जहाँ, सर्वोत्तम है मौन।
वाचालों की भीड़ में, तुझे सुनेगा कौन ?
तुझे सुनेगा कौन, मूर्ख अपनी ही कहते।
बेमतलब की बात, कर्ण कर्कशता सहते।
कहती है 'सुधि' सत्य, आप की महिमा घटती।
हो यदि ज्ञान अपूर्ण, वहीं पर बात बिगड़ती।।

मीठी बोली का भला, ये कैसा आतंक।
बोल सुरीले बोलकर, मच्छर मारे डंक।।
मच्छर मारे डंक, धूर्त ऐसा ही करते।
मन मे उनके मैल, पुष्प वाणी से झरते।
कहती है सुधि सत्य, न बन उनका हमजोली।
पहुँचाते ये हानि, बोलकर मीठी बोली।।

बाधाओं से जीतकर, निखरा हर व्यक्तित्व।
जैसे रेगिस्तान में, तरु रखता अस्तित्व।।
तरु रखता अस्तित्व, खुशी से मुस्काता है।
कीचड़ में भी कमल, गर्व से इठलाता है।
कहती है सुधि सत्य, लड़ा जो तूफानों से।
मिली न उसको हार, कभी फिर बाधाओं से।।

धीरज रख मुश्किल घड़ी, हरदम ठहर न पाय ।
यह सर्दी का कोहरा, दिन चढ़ते छँट जाय ।।
दिन चढ़ते छँट जाय, राह जब धुँधली लगती ।
तब ही तम को भेद, आस की किरण निकलती।
कहती है सुधि सत्य, खिले आशा का नीरज।
कर लेगा पथ पार, तनिक रख उर में धीरज।।

अब ही तो पल साथ था, निभा रहा था प्रीत।
अगले ही क्षण कह गया, लो मैं हुआ अतीत।।
लो मैं हुआ अतीत, गँवाया नाहक मुझको।
काश! उठाते लाभ, मिलूँगा अब कब तुझको?
कहती है 'सुधि' सत्य, व्यर्थ खोते हम सब ही।
बहुत कीमती वक़्त, इसे जीना है अब ही।।

बेशक लाख छिपाइए, अपनी कुत्सित राय।
लहज़ा लेकिन आपका, प्रकट करे अभिप्राय।।
प्रकट करे अभिप्राय, हृदय के राज बताए ।
कड़वी-मीठी बात, नेह न घृणा छिपाए।
कहती है सुधि सत्य, नही हूँ मैं उपदेशक।
लहज़ा पूर्ण किताब, देख लें पढ़ कर बेशक।।

मस्ती से चलता रहे, करे नहीं परवाह।
तूफानों से जूझना, बस साहस की चाह।।
बस साहस की चाह, हमेशा आगे बढ़ना।
दुर्गम बेशक राह, शिखर पर उसको चढ़ना।
कहती है सुधि सत्य, मिटाकर डर की हस्ती।
कर खुद पर विश्वास, झूमती उसकी मस्ती।।

अपने दिल में खामियाँ, कुछ तो कहीं जरूर ।
परहित का तब ही यहाँ, बचा नहीं दस्तूर ।।
बचा नहीं दस्तूर, स्वार्थ ही रहता सम्मुख।
हुई मनुज की आज, भावनाएँ सब बेरुख।
कहती है सुधि सत्य, जगें मन सुंदर सपने ।
परहित का श्रृंगार, करें आ दिल में अपने।।

सुंदर ,मोहक, कीमती, अनुपम ये उपहार।
कुदरत पालनहार है, कुदरत खेवनहार।।
कुदरत खेवनहार, सभी संसाधन देती।
जीवन का शैथिल्य, पलों में ही हर लेती।
महकाती है रूह, झाँक कर देखो अंदर।
तब होगा महसूस, प्रकृति कितनी है सुंदर।।

नीला, पीला, बैंगनी, श्वेत कभी है लाल।
खाखी,श्यामल रंग से, कुदरत मालामाल।।
कुदरत मालामाल, घटाएँ काली गहरी।
लेकर आती धूप, साथ मे किरण सुनहरी।
कहती है सुधि सत्य, नज़ारा ये रंगीला।
चमकें तारे, चाँद, हँसे यह अम्बर नीला।।

अनिल कुमार मिश्र
राँची

मील के पत्थर

मील के पत्थर
बड़े नाराज़ हैं
अब नहीं चाहते किसी को भी
रास्ता दिखाना
यह महसूस कराना कि
वे मंज़िल के कितने करीब हैं
उन्हें पता है
आज के पथ-प्रदर्शकों का भविष्य-
कुंठा,संताप और अभाव
ये पत्थर मंज़िल पर ठहरना चाहते हैं
बीच रास्ते पर रुकना
यहाँ-वहाँ गड़ जाना
उनके उत्साह को बाधित करता है
वे चलने को तैयार हैं
उन राहों पर
गुज़रने को तैयार हैं
उन कठिन राहों से
मंज़िल पर ठहरने के लिए
पर दूसरे को रास्ता दिखाना नहीं चाहते
उन्हें पता है-
रास्ता दिखानेवाले का अंत
बहुत दुःखद होता है
वे पश्चाताप की अग्नि में
जलते रहते हैं अनवरत
सहते रहते हैं
मानसिक मौसम की मार-
तेज बारिश,धूप,हवाओं के तीखे थपेड़े
भारी ओलावृष्टि भी
अपमान के कड़वे घूँट के साथ।
मंज़िल पर पहुँचनेवाले मुसाफ़िर
आज श्रेय भी नहीं देते
इन पत्थरों को
पूरी की पूरी शाबाशी ले जाता है
व्यंग्यात्मक शैली में हँसता, मुस्कुराता,
आज का जी पी एस।

डॉ.राजीव डोगरा
कांगड़ा हिमाचल प्रदेश

अजनबी तन्हाई

कौन सा दर्द
अपने सीने में छुपाए रखते हो?
मुस्कुराहट के पीछे
कौन सा गम
अपने ह्रदय में दबाए रखते हो?
कहते हो तुम
लोगों से अक्सर
कि मुझे कोई गम नहीं ?
फिर इस
तन्हाई के आलम में
किस से गुफ्तगू का
माहौल बनाए रखते हो?
सुना है लोगों से
कि तुम बहुत
बातें करते हो
पर आता है नाम मेरा तो
क्यों अपने लबों पर खामोशी
और आंखों में मुस्कुराहट रखते हो?

इंतजार

अंधेरों को जैसे
रोशनी का इंतजार है।
नफरत को जैसे
मोहब्बत का इंतजार है।
बादलों को जैसे
बरसने का इंतजार है।
राहों को जैसे
हमराही का इंतजार है।
वृक्षों को जैसे
खिलते हुए पत्तों का इंतजार है।
सूखी भूमि को जैसे
वर्षा का इंतजार है।
सावन को जैसे
बहारों का इंतजार है।
वैसे मुझे तुम्हारा
मेरे जीवन में इंतजार है।

शेफालिका सिन्हा

रांची, झारखंड।

असली सुख

टेढ़े-मेढ़े , ऊबड़-खाबड़
सड़क पार कर लेते हैं
जीवन आगे बढ़ जाता है
बहुत कुछ पा लेते हैं।

आगे बढ़कर पीछे मुड़ना
भी जरूरी हो जाता है
नहीं तो संबंधों का स्नेह
कहीं खत्म हो जाता है।

अपने लोगों, अपनी जमीन से
जो सड़क राह बनाती है
जीवन में बढ़ने का
असली सुख दे जाती है।

श्रृंगार रहे बरकरार

जंगल- पहाड़,नदी- नालों पर
बुरी नज़र पड़े नहीं
बोझ पृथ्वी पर बढ़े नहीं ,
स्वच्छ जल,आकाश रहे
जल- जंगल- जमीन
का साथ रहे और
हमें याद रहे ,
पशु- पक्षी- पेड़
हैं ये पृथ्वी के श्रृंगार
यही हमारे सुख का आधार।

अपनी जान से अधिक
हमें अपनी पृथ्वी से
करना होगा प्यार,
अपनी जरूरतों के साथ
रखना होगा उसका ख्याल
करना होगा बहुत दुलार
ताकि श्रृंगार रहे बरकरार।।

डॉ दिव्या कुमावत

(मनोवैज्ञानिक सलाहकार)

ओ स्त्री

प्रथम निमंत्रण तुमको आज
अंतर्शक्ति को तीव्र बनाकर, अस्थिर मन पर काबू पाकर,
बस संकल्पों पर बढ़ती जाना, अपने भीतर के तप से अब,
तुम पहले गौरा बन जाना,
शम्भू उसके बाद मिलेंगे

प्रथम निमंत्रण तुमको आज,
मन में निर्मल प्रेम बसा कर,
तुम बस पहले बहती जाना, अपने उग्र प्रवाह को भरकर,
तुम पहले गंगा बन जाना,
शंकर उसके बाद धरेंगे

प्रथम निमंत्रण तुमको आज,
तुम कांता हो तुम रमणी हो, अपनी सुषमा का बोध करो,
अपने आप में सक्षम हो तुम, भरकर सारे गुणों की पूंजी,
अपनी आभा को बिखराना,
तुम पहले लक्ष्मी बन जाना
विष्णु उसके बाद मिलेंगे

प्रथम निमंत्रण तुमको आज,
भीतर की चंचलता रखकर,
प्रेम भाव की शक्ति स्वरूपा,
धैर्य कर्म को मार्ग बनाकर,
तुम पहले राधा बन जाना,
कान्हा उसके बाद मिलेंगे

प्रथम निमंत्रण तुमको आज,
सत्यनिष्ठा को धर कर प्रतिपल, गरिमा को अपना शस्त्र
बना,
साहस से निष्पक्ष खड़ी हो,
तुम पहले शक्ति बन जाना,
शंकर उसके बाद मिलेंगे

प्रथम निमंत्रण तुमको आज,
ओ स्त्री, तुम तो बस पहले अपनी जैसी बन जाना।

ग़ज़ल

केशव शरण

वाराणसी

1

लिए हैं गुल दिए हैं ख़ार लेकिन
मुझे उनसे बहुत है प्यार लेकिन

असल में इश्क़ इक धीमा ज़हर है
करम से हुस्न के रसदार लेकिन

मुझे आगाह करती रूह मेरी
बँधा मैं रूप से लाचार लेकिन

मुहब्बत के सजाए ख़्वाब कितने
हुए साबित सभी बेकार लेकिन

समय कुछ चाँदनी का धूप का भी
ज़ियादातर समय अँधियार लेकिन

मसीहा मर्ज़ मेरा ठीक कर दे
किया है अर्ज़ कितनी बार लेकिन

ग़मों के सब मिले मारे हुए ही
मुझे पाना रहा ग़म-ख़्वार लेकिन

2

उसे पाया न जिसका पात्र हूँ मैं
बहुत कह लो अभागा पात्र हूँ मैं

अलग से कुछ मुझे कहना नहीं है
तुम्हारे नाटकों का पात्र हूँ मैं

बनाना काम अपना है उन्हें कुछ
बुरा था आज अच्छा पात्र हूँ मैं

वही जिसने मुझे ख़ाली किया है
बताता है कि छूँछा पात्र हूँ मैं

मुझे अब कौन माँजेगा बता दो
तुम्हारा एक जूठा पात्र हूँ मैं

नशा या स्वाद बेहतर हो न लेकिन
डिजाइन से अनोखा पात्र हूँ मैं

किसी भी रोज़ मुझको फेंक सकते
नया पाकर कि टूटा पात्र हूँ मैं

3

फटी धरती फटा अम्बर नहीं था
दिखा ऐसा कभी मंज़र नहीं था

सभी के पास होता था नरम दिल
किसी के हाथ में ख़ंजर नहीं था

किसे दे प्यार ये था सुन्दरी पर
मगर क्या शख़्स मैं सुन्दर नहीं था

नहीं था कौन-सा सामान सुख का
मगर जीवन कभी सुखकर नहीं था

यहाँ जब खिल रहे थे फूल हर सू
यहाँ का आदमी पत्थर नहीं था

कभी गुल, ख़ार थे पूरक परस्पर
अभी-सा नफ़रती अंतर नहीं था

उतारा गोद से मग़रूर को जब
रहा फिर बोझ भी सर पर नहीं था

4

रहम है या सताना क्या कहें हम
तुम्हारा मुस्कुराना क्या कहें हम

फ़िदा क़ातिल अदाओं पर रहा दिल
इसे फिर ज़ुल्म ढाना क्या कहें हम

निकट ख़ुदगर्ज़ियां ले आ रही हैं
मुहब्बत का ज़माना क्या कहें हम

हरा जंगल जलाना इस हवा का
जले दीपक बुझाना क्या कहें हम

धँसा है तीर बीचो-बीच दिल के
हसीं तेरा निशाना क्या कहें हम

नए क़िस्से न बनते ज़िंदगी के
पुराना ही फ़साना क्या कहें हम

तक़ाज़ा प्यार का अपना पुराना
नया उनका बहाना क्या कहें हम

5

न रहने से तुम्हारे कम सुहाना
चमन ये और ये मौसम सुहाना

लगा जैसे कि सावन आ गया है
नयन गीले हुए तो ग़म सुहाना

कई तस्वीर लेंगे वो हमारी
लगाते ज़ख़्म पर मरहम सुहाना

भले है लक्ष्य निश्चित, पथ अनिश्चित
सफ़र किस दम बुरा किस दम सुहाना

रहा इस मोड़ की पहचान बनकर
मगर वो कट गया शीशम सुहाना

महीना चल रहा मधुमास का ये
सुनाई दे न सुर पंचम सुहाना

तुम्हारे दूर रहने से न होता
हमारा घूमना संगम सुहाना

6

थमेंगे क्यों गुज़रना ही अगर है
हिमालय पार करना ही अगर है

बुरी क्या हुस्न की क़ातिल अदाएँ
हमें इक रोज़ मरना ही अगर है

भुलाना एक बेहतर रास्ता है
हमें नुक़सान भरना ही अगर है

खड़े कब तक रहेंगे हम किनारे
उफानों में उतरना ही अगर है

मिले भी मुक्ति वादों की कसक से
मुकर जाएँ मुकरना ही अगर है

बनाता फिर न शीशे का मकां तू
न हो पथराव डरना ही अगर है

अकेला ही चलूँगा लक्ष्य लेकर
समूहों को बिखरना ही अगर है

शुचि मिश्रा
जौनपुर

भाषा के भीतर

भाषा के भीतर प्रवेश करती हूँ
उजरे-उजरे अर्थों में दमकती हूँ
बरगद की बाहरी जड़ों से ताकत पा
खोखला करने वाले दीमक पर हँसती हूँ
बीज के खोल हटा अंकुरित होती हूँ
मुस्काती हूँ धरा की परत को हटाकर
उग आती हूँ चट्टानों पर नमीं लाकर
यूँ ज़िंदगी जीती हूँ भाषा के भीतर !

पानी पर लिखी इबारत

आश्चर्य है कि पूरे चाँद की रात में
किस गति से तैर गया तैराक
खिंच गई दरिया के सीने पर रेख
एक-एक कर टूट गए तारे, डूब गए
दरक गया आशंकाओं का पहाड़
लहरों ने पलटकर तोड़ दी चट्टानें

पानी पर लिखी यह अभूतपूर्व इबारत
पल दो पल में समा जाएगी पानी में ही
लेकिन यह जो असंभव-सा दिखने वाला
काम
कर गया वह दुबला-सा तैराक, उसकी
याद
रहेगी ताउम्र टीसती-सी, सालती-सी

कहेगी वह बार-बार यह कहानी अमिट
कि दरिया में सिर्फ लाश ही नहीं तैरती
जिंदगी भी तैर जाती है, ज़िद भरी
भरोसे के बाजू हमेशा बनते हैं चप्पू।

दीवाल में आला

दीवाल में एक आला है
आले में दीप धर दिया गया है
दीप किसी का चेहरा
या आँखें भी हो सकती हैं
जो प्रज्वलित हैं

आँखों का प्रकाश फैला है कमरे में
प्रकाश की अनुपस्थिति होगी
तब अवश्यम्भावी है
अंधकार का होना

दीवाल जिसके आले में
धरा है दीप या चेहरा
आधुनिक है वहाँ आँखों का होना
प्रासंगिक भी
जबकि हर एक दीवाल
होती है प्राचीन
अदृश्य दीवालें भी
सोच की दीवालें भी
विचारों की भी

दीवालों में आले का होना
संभावनाओं का होना है
दीवालों की वेदना और खुशी
आले के पीछे रही आती है हमेशा।

दादा जी दरख़्त हैं

दादा जी दरख़्त हैं
इस घर के
दरख़्त घर के आँगन में
जमा है बरसों से
बहुत गहरे तक फैली है
दरख़्त की जड़ें
यहाँ तक कि दीवारों में भी
धँस गई हैं वे
और दिलचस्प है कि
इन दीवारों को दे रही है सहारा
जिसके चलते 'अब गिरी कि अब'
दिखने वाली दीवारें 'जस की तस' हैं
एक मुद्दत से

दरख़्त मुखिया है घर का
मूलनिवासी क्षेत्र-नगर का
लोग इसी के नाम से
जानते हैं हमें,
बतलाते हैं वे
इस दरख़्त की कहानी
कि उनके देखते-देखते
कई बार सूख कर हरा हुआ है यह
दरख़्त कच्चे सूत से सूता गया
तीज त्यौहार पर
सुहागिनों ने की परिक्रमा
पूजा अर्चना की और
अपने हाथों असीसा दरख़्त ने

दरख़्त अपने ज़ख्म
छुपाता रहा गाहे-बगाहे
पोंछता रहा अपने पत्तों से नम आँखें
जब क्रोध में आया तो सहस्त्रबाहु की
तरह
फैला दी अपनी भुजाएं दसों-दिशाओं में
खड़ा रहा आँधियों में अडिग

दरख़्त की शाखाओं पर
पड़ोसी घर को गुमान है अपनेपन का
जब बजते हैं दरख़्त के पत्ते
छिड़ता है संगीत
और नाच उठता है पूरा मोहल्ला

दरख्त की यूं तो बहुत-सी कहानियां हैं
जिसे समय कहता रहा है
फिलवक्त इतना कहना है
कि अपने ही बीज से
अंकुरित पौध को देख
हर्षित हो रहा है दरख़्त

दादा जी दरख़्त हैं
इस घर के
घर हर्षित होता है उनसे।

या कि समुद्र

नदी में लहरें उठ रही हैं
नदी बातें कर रही है

किताबी ज्ञान बघारने वाला
इस क्रिया को
हवा के दबाव से जोड़कर देखेगा

नदी की वेदना चट्टान समझेगी
जिससे फूटकर निकली है वह

या कि समुद्र... प्रतीक्षारत !

प्रवीण पारीक 'अंशु'

जिला सिरसा(हरियाणा)

ग़ज़लें

1.

ग़मों के घूँट भर लेते, समुंदर हो गए होते
अगर पीते ज़हर हँसकर, तो शंकर हो गए होते

मुसीबत एक जाती है तो पीछे दूसरी आती
कभी तो चैन के दो पल मयस्सर हो गए होते

भला हो आँसुओं का जो ग़मों का बोझ ढोते हैं
नहीं जो खुल के हम रोते, तो पत्थर हो गए होते

ढिंढोरा पीटते ही रह गए ईमानदारी का
अगर कुछ घूस दी होती, तो अफ़सर हो गए होते

खुदा का शुक्र है, तेरा सहारा मिल गया हमको
वगरना टूटते ऐसे कि खँडहर हो गए होते

अगर हम छोड़ देते वक्त रहते दुनियादारी को
तो सच कहते हैं हम दुनिया से ऊपर हो गये होते

तुम्हें डर टूटने का था, तो आईना बने ही क्यों
अरे, इससे तो अच्छा था कि पत्थर हो गए होते

अगर ईमानदारी से निभाते फ़र्ज़ सब अपना
तो अब तक देश के हालात बेहतर हो गए होते

नहीं बेची कलम अपनी, नहीं बेचा ज़मीर अपना
किसी के चाटते तलवे, तो शायर हो गए होते

2.

पास तेरे ज़र, जमीं, ज़ेवर नहीं तो क्या हुआ
हाल औरों से तेरा बेहतर नहीं तो क्या हुआ

प्यार से रहते हैं सब तो एक कमरा है बहुत
आठ कमरों का तुम्हारा घर नहीं, तो क्या हुआ

वो परिंदा आसमां को नाप लेगा बिल यकीं
पास उसके हौसला है, 'पर' नहीं तो क्या हुआ

घर में हर मेहमान को जो मानता है देवता
उस मुक़द्दस घर में पूजाघर नहीं तो क्या हुआ

घाव तो वैसे भी तुमने खूब सारे दे दिये
हाथ में तेरे अगर पत्थर नहीं तो क्या हुआ

खेलता अल्फाज़ से हूँ, सिर्फ अपने शौक से
मैं तुम्हारी नज़रों में शायर नहीं तो क्या हुआ

3.

आए थे तो, मिलकर जाते कम से कम
पल दो पल का साथ निभाते कम से कम

शर्मो हया ने लब सी डाले थे, माना
आँखों से ही कुछ कह जाते कम से कम

और नहीं कुछ लाए मेरी विदाई पर
आँखों में आँसू भर लाते कम से कम

मिलने को नहीं आए, कोई बात नहीं
ख़्वाबों में ही तुम आ जाते कम से कम

बनने को भगवान चले हैं जो कुछ लोग
पहले इंसां तो बन जाते कम से कम

माना, सरकारें गूंगी और बहरी हैं
तुम अपनी आवाज़ उठाते कम से कम

ऐसी भी क्या जल्दी थी घर जाने की
शेर हमारा सुनकर जाते कम से कम

4.

बादल हैं घनघोर बहुत
घर की छत कमजोर बहुत

महफ़िल में चुप रहता हूँ
मन के भीतर शोर बहुत

बचकर ही रहना ए दिल
फिरते हैं चितचोर बहुत

जब भी इबादत की सोची
देखा तेरी ओर बहुत

बाजारों में आ बैठे
आज मुनाफाखोर बहुत

चल, जंगल में चलते हैं
शहर में आदमखोर बहुत

फ़ाइल पास कहाँ से हो
बैठे रिश्वतखोर बहुत

प्रेरणा पुरोहित मंत्री

जयपुर

दोहे (विषय-शीत)

बड़ी सुहाती रश्मियाँ,मद्धम सविता रूप।
चोला कोई ऊन का,बुनती दिखती धूप।।

शीत शर्वरी का मुझे, दिखा न कोई छोर।
कुहरे का कंबल लिये, लगी धूजती भोर।।

कातिक-अगहन मास से, पौष-माघ के बाद।
फागुन आने तक चली, शरद! तुम्हारी याद।।

शिशिर उमर का बीतता,लौटा नहीं बसंत।
पतझड़ चलता जा रहा, कब आएंगे कंत?

है खिड़की के काँच पर, बसा प्रीत का गाम।
मीत!शीत में था लिखा,कभी तुम्हारा नाम।।

आलिंगन की ऊष्णता, जटिल मौन संवाद।
शीत!मुझे तुम ही लगी, एकमात्र अनुवाद।।

थकित विटप,सो तो गये, किंतु ऊघड़ी पीठ।
रह रह कर है छेड़ती,शीत बड़ी ही ढीठ।।

मौन चाहना साधते,झर सुधियों के कूल।
शिशिर!तुम्हारी चाह में,प्राजक्ता के फूल।।

लिखा शीत ने काव्य ये,डूब प्रेम में आज।
हमको भी भाने लगा,उसका ये अंदाज।।

-

मंजू मैत्री

लखनऊ

सपनों की डोली

सपनों की डोली चढ़..
एक लड़की जब आती है,
अपने पिय के घर
सहमी हुईं लजीली आखों से देखती है।
उन सबको जो-
दिखते हैं अनजाने से
पर सब के सब कितने अपने होते हैं।
प्रणय पथ पर सकुचाई सहमी हुईं रखती है
अपनी महावरी पाजेबी पाँव, कि- पिय कह उठते हैं- सुनो!
बहू हो इस घर की..
बहुत सी जिम्मादेरियाँ हैं तुमपर..
मेरे माता-पिता की सेवा करना..।
मेरे परिवार को अपना परिवार समझना..
और फिर..
आए दिन, उसकी देंह.. पग-पग बढ़ती जाती है,
पिय के संग प्रणय पथ पर;
और अंतरात्मा..??
..उसी पल उठाने लगती है जिम्मेदारियों की बोझ
करने लगती है सास-ससुर की सेवा
मानने लगती है सबको अपना परिवार
अधकचिया नींद भरी आखें हर पल देखती हैं-
झरोखों को
कहीं सोई न रह जाऊँ देर तक
क्या मुंह दिखाऊँगी सबको..?
माँ ने भी तो सिखाया था सबसे पहले “भोर” ही उठने को...।
एक लड़की पत्नी का रूप धर..
अपने पति की सेज पर,
सो क्या जाती हैं..
..जैसे कि..
पूरी की पूरी कायनात उसे जिम्मेदारियों का पाठ पढ़ाने में
लग जाती है।
और फिर..
सपनों की डोली चढ़ी एक लड़की
,अपने पिय के घर मेंअंतर्मन से,
वहीं की वहीं रह जाती हैं।

डॉ.संध्या शुक्ल 'मृदुल'

वो मध्य प्रदेश है मेरा

जहां हिंदू मुस्लिम सिख ईसाई,
डालें अपना डेरा,
वो मध्य प्रदेश है मेरा।

जहां सोन बेतवा और ताप्ती नदियां,
झर झर बहती जाएं,
वो मध्य प्रदेश है मेरा।

जहां चंबल और नर्मदा की धारा,
वन उपवन हरियाएं,
वो मध्य प्रदेश है मेरा।

जहां सतपुड़ा, पचमढ़ी की पहाड़ियां,
अपनी अनुपम छटा बिखेरे,
वो मध्य प्रदेश है मेरा।

जहां मैहर उज्जैनी और ओंकारेश्वर,
धार्मिक स्थल कहलाएं,
वो मध्य प्रदेश है मेरा।

जहां लहर लहर लहराती फसलें,
कृषकों का मन हर्षाएं,
वो मध्य प्रदेश है।

जहां कान्हा बांधवगढ़ राष्ट्रीय उद्यान,
पर्यटकों का मान लुभाएं,
वो मध्य प्रदेश है मेरा।

जहां भेड़ाघाट की संगमरमरी वादियां,
विश्व प्रसिद्ध कहलाएं,
वो मध्य प्रदेश है मेरा।

जहां संगीत नृत्य और लोक कथाएं,
अनुपम छटा बिखेरे,
वो मध्य प्रदेश मेरा।

सुरभि डागर

पत्र पेटिका

ताकतीं रहतीं हैं पत्र पेटिका
नहीं आतीं हैं अब चिठ्ठीयाँ
साईकिल पर सवार चले आते थे
डाकिया बाबू , साईकिल की
घंटी से उचक जाते थे लोग
ले आए डाकिया बाबू चिtयाँ।
खिल उठते थे माँ , पिताजी,
ताई ,चाची, भाभी बच्चों के चेहरे
पढ़कर अपनी अपनी चिठ्ठीयाँ
बूढ़ी आँखे तरस गई,कोई नहीं
लिखता अपनों को अब चिठ्ठीयाँ
आतें तो है कभी कभी डाकिया
बाबू पर आतीं नहीं चिठ्ठीयाँ।
उदास लटकीं रहती है पत्र पेटिका
नहीं लिखता है अब कोई चिठ्ठीयाँ

खूबीयाँ

खामियाँ नहीं मैं खुबियां
तलाशती हूँ।
जीवन को सुन्दर बनाने की
वजह तलाशती हूँ।
नहीं ढूंढती हूँ बेवजह मैं गलतियाँ
क्योंकि मैं खूबियां तलाशती हूँ।
और बेहतर बनाऊ खुद मै
कुछ ऐसी कला तलाशती हूँ।
डगमगाते है पैर यदि मेरे
मैं खुश हूँ खुद को संभालती हूँ।
क्यों रूक जाऊ मैं
डरकर ,दबकर किसी से
क्योंकि मैं कठिनाईयों में
राह खुद निकालती हूँ।
है नेक इरादें मेरे
ना किसी को मैं गिराती
क्योंकि मैं खुद को संवारती हूँ।
खामियां नहीं मैं खुशियाँ
तलाशती हूँ।

गोपाल सिन्हा

हांगकांग

कवि और कविता

कवि और कविता,
उद्देश्य, अर्थ, गहराई,
निष्ठा, मौलिकता सब लापता,
जैसे भीड़ में खो गये हों दोनों,
अब पूछते, एक-दूसरे का पता,
एक कर्ता, दूसरी क्रिया,
मन में उठे भावों की शाब्दिक
अभिव्यक्ति की अनूठी प्रक्रिया,
कृत्रिम नहीं सहज,
अध्ययन, अनुभव, यथार्थ ही नहीं महज,
कल्पनाशीलता, शैली का संयोग अचरज,
समाज का दर्पण, पूर्वाग्रहों से दूर,
जन-जन को साहित्य से जोड़ती एक डोर,
झूठी प्रशंसा की आशा,
चाटूकारिता में निपुण कवि,
भाषा-व्याकरण ज्ञान से निराशा,
ऐसे छद्म मंच और कविगण,
हिंदी का कर नुकसान,
सस्ती लोकप्रियता, व्यापार का रख ध्यान,
कविता, साहित्य, रचनाधर्मिता की,
गढ़ रहे नयी परिभाषा।

,

प्रो.(डॉ.)शरद नारायण खरे

प्राचार्य
शासकीय जगन्नाथ मुन्नालाल चौधरी महिला महाविद्यालय
मंडला(मप्र)-481661

शरद-आगमन

धुंध छाई,लुप्त सूरज,शीत का वातावरण,
आदमी का ठंड का बदला हुआ है आचरण।

रेल धीमी,मंद जीवन,सुस्त हर इक जीव है,
है ढके इंसान को ऊनी लबादा आवरण।

धुंध ने कब्जा किया,सड़कों पे,नापे रास्ते,
ज़िन्दगी कम्बल में लिपटी लड़खड़ाया है चरण।

पास जिनके है रईसी,उनको ना कोई फिकर,
जो पड़े फुटपाथ पर,उनका तो होना है मरण ।

जो ठिठुरते रात सारी राह देखें भोर की,
बैठ सूरज धूप में गर्मी का वे करते वरण।

धुंध ने मजदूरी खाली,खा लिया है चैन को,
ये कहाँ से आ गया जाड़ा,करे जीवन-क्षरण।

ज़िन्दगी में धुंध है,बाहर भी छाई धुंध है,
ठंड बन रावण करे सुख की सिया का अब हरण।

डॉ.विनीत मोहन औदिच्य

सॉनेटियर व ग़ज़लकार
सागर, मध्यप्रदेश

स्वयं में... (सॉनेट)

जिस प्रश्न से हूँ मैं अतिशय व्यथित
उस प्रश्न का क्यों होता सदा आविर्भाव
मैं उत्तर से होता हूँ अत्यंत विचलित
रहता हूँ उससे विच्छिन्न..लिए दुराव

शंकित मन को दे धैर्य व आश्वासन
करता शांत पर नहीं होता विस्मृत
जन्म लेकर बारम्बार मैं करता दमन
स्थिर नहीं होता यह लौकिक वृत्त

मैं स्वयं से हो विरक्त करता याचना
महायोगी के द्वार पर हो संपूर्ण रिक्त
वृक्षों पर देख जीर्ण नीड़ की वेदना
क्षतात्क्त हृदय को करता नित्य सिक्त

क्यों इस सागर को कहते हो मरुथल?
कहाँ है मरीचिका कहाँ है वह पुष्पदल?

भावना (सॉनेट)

नहीं होगा वंचित यह दुःख अबसे
समग्रता से ले जाऊँगा मैं एकांत
तुम देखना, जल की छाया तबसे
होगा सबकुछ यहाँ कितना अशांत

मन को आकाश से कर तुलना सदा
भर लेता हूँ सारे अभेद्य रहास्यों को
मोह नहीं जैसे सूखे पत्ते से पेड़ों का
देखा है पहाड़ों में लीन होती बूंदो को

अनेक भावनाएँ दौड़ती हैं हो उन्मत्त
सुनता हूँ शोर जब होते असहाय सब
मूर्तियों में कर प्राण संचार अनवरत
रश्मियाँ होतीं अंतर्धान रोती हुई तब।

है जीवन कितना सुंदर सफल सपना
नाटक की पात्र है मानव की भावना।

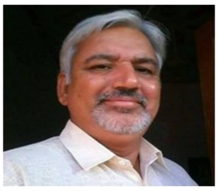

राजपाल सिंह गुलिया

झज्जर (हरियाणा)

हाइकु

1.
सूरज चला
अँधेरा आता देख
दीपक जला
2.
ठिठुरी रातें
लेकर आ गयीं हैं
जलती बातें
3.
सूरज डूबा
दिन की जलन से
कुछ यूँ ऊबा
4.
बिका था न्याय
सत्य के साथ जब
हुआ अन्याय
5.
शीत लहर
चले तो ढ़ाती है ये
एक कहर
6.
पूछा था कौन
दुबका ले भय को
कोने में मौन
7.
सावन आया
दादुर बिना बात
ही क्यों टर्राया
8
कोरा ख़याल
तोड़ेगा व्यवस्था का
मकड़जाल
9.
जीवन गीत
गाना तब ही जब
साज हो प्रीत
10.
हवा स्वच्छंद
चूरा लायी देखो
फूलों की गंध
11.
ओस आ पड़ी
ठहरेगी तृण पे
घड़ी दो घड़ी
12.
सोने का मृग
अटक सा गया वो
सीता के दृग
13.
आयीं थी वर्षा
गिरा गई किसी का
वह घर सा
14.
बढ़ता भार
धरती पर देखो
पड़ी दरार
15.
चौपट राजा
एक ही भाव मिले
भाजी औ' खाजा
16.
फोन है मित्र
सुने और सुनाए
बड़ा विचित्र
17.
भूले हैं राह
मन से बेखबर
मंजिल चाह
18.
बीमार हवा
चिमनियाँ दे रहीं
इसको दवा
19.
नारी संघर्ष
पैदा करे नर में
असीम हर्ष
20.
एक कहानी
सभी खोजते फिरें
हैं दाना -पानी

समीक्षा

डॉ. इन्द्र सेंगर

भारतीय परिवेश को खंगालती रचनाएं

मिला काल से आँख' वरिष्ठ कवि श्री भारत भूषण आर्य कीसद्य प्रकाशित कृति है। इससे पहले आपकी दोहा, गजल और कविता विधा में 5 कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनका हिन्दी जगत् में हार्दिक स्वागत हुआ है। इस कृति को आपने 'कुंडलिया छन्द' में प्रस्तुत किया है। इसकी भूमिका यशस्वी साहित्यकार डॉ. देवेन्द्र आर्य ने लिखी है। इसमें 200 कुंडलिया छन्द समाविष्ट हैं। पुस्तक का प्रारंभ 'गणेश जी की वन्दना' से किया गया है। इसमें कवि के उदात्त भाव का ज्वलन्त प्रमाण निहित है। कवि अक्षर-अक्षर में ब्रह्म और ज्ञान का आलोक प्रस्फुटित होने और संसार तिमिर-मुक्त होने एवं दशों दिशाओं में ज्ञान के दीप के आलोक की प्रार्थना करता है-

लम्बोदर ! हे गजवदन ! दो ऐसा वरदान,
अक्षर-अक्षर ब्रह्म हो, अक्षर-अक्षर ज्ञान।
अक्षर-अक्षर ज्ञान, बहे हर ओर उजाला,
कटें तिमिर के पाश, मिटे नफरत की ज्वाला।
कह भूषण कवि आर्य, बने मन प्रेम-सरोवर,
जले दीप से दीप, दसों दिश हे लम्बोदर ।। (पृष्ठ 21)

इस कृति में कतिपय कुंडलियाँ कवि की जीवन-संगिनी दिवंगता अनुराधा की स्मृति में भी लिखी गई हैं, जो भारत भूषण आर्य को हिन्दी-काव्य की शोक-गीत परम्परा के कवियों में पंक्तिबद्ध करती हैं। यह बिछोह की सघन पीड़ा कई कुंडलियों में पाठक को वेदना के गहन सागर में डुबा देती है-

जाने से पहले जरा कर लेते दो बात,
कुछ तो घटती दर्द की लम्बी काली रात।
लम्बी काली रात पता है कैसी होती,
बिन पानी ज्यों मीन तड़पती, वैसी होती।
कह भूषण कवि आर्य, हुए हम तुम अनजाने,
फिर भी गाता रोज, तुम्हें क्यों मन ही जाने।। (पृष्ठ 29)

कवि ने अपनी कृति में प्रेम को, लौकिक और अलौकिक दोनों स्तरों पर अत्यन्त व्यापक और उदारता के साथ प्रस्तुत किया है। उसका ढाई आखर का प्रेम कभी कबीर का निर्गुण राम बन जाता है तो कभी सूर का श्याम बन जाता है। उनका प्रेम सागर से गहरा और आकाश से भी ऊँचा है। साथ ही सागर और सरिता के सम्पृक्त मिलन जैसा है-

सागर में नदिया मिली, मिला प्रेम का तीर,
प्रीति सुहागिन हो गई मिला नीर में नीर।
x x x
कह भूषण कवि आर्य, प्रेम के ढाई आखर ।
जिसने साधे, पार, पार वह सातों सागर ।। (पृष्ठ 21)

कवि की सशक्त मान्यता है कि जिस प्रकार बिना फूल के उपवन नहीं होता, उसी प्रकार बिना प्रेम के जीवन भी निरर्थक होता है। अहिंसा एवं गांधी जी के आदर्श की याद दिलाते हुए कवि का कथन है-

गांधी बाबा कर दिए अलमारी में बंद,
बन्दूकें अब लिख रहीं अमन चैन के छंद । (पृष्ठ 28)
दुर्योधन की सज रही पग-पग पर बारात,
सत्य-अहिंसा हो गई दो कौड़ी की बात। (पृष्ठ 28)

समग्र पुस्तक का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि प्रिय भाई भारत भूषण का रचनाकार जिस काव्य के वटवृक्ष पर बैठा है, वहाँ से वह समाज, देश, राजनीति और संस्कृति के सूक्ष्म से सूक्ष्म कार्यकलापों का पुंखानुपुंख अवलोकन कर रहा है और उसे अभिव्यक्त करता है कुंडली के रूप में।

आज भारतीय समाज अनेक विसंगतियों, समस्याओं, अंधविश्वासों, रूढ़ियों आदि से जूझ रहा है। समाज में विषमता का परिवेश, नई पीढ़ी की माता-पिता के प्रति संवेदनहीनता, टूटते परिवार, रिश्तों का खोखलापन, आदि भारतीय संस्कृति की जड़ों को कमजोर कर रहे हैं। वैश्वीकरण के दौर में पश्चिमी बयार ने जन-मानस को प्रभावित किया है। यह सब कवि की कलम से इस काव्य-कृति में अत्यन्त प्रभावी रूप में व्यक्त किया गया है।

मैंने कहा न कि कवि अपनी भावनाओं के महावृक्ष पर बैठकर सब पर अपनी नजर टिकाए हुए है। चाहे आज के वे साधु-संत हों, जो दिन-रात समाज के सामने अन्धविश्वास और रूढ़ियों का अम्बार परोस रहे हैं। चाहे भारतीय राजनीति का गिरता हुआ स्तर हो, इन सभी का जिक्र भी कवि से बेहद ईमानदारी से किया है-

जिस दल में कुर्सी मिली, हुए उसी के यार,
राजनीति में एक से बढ़कर एक सियार। (पृष्ठ 95)

कुंडलियों में प्राकृतिक चित्रण का सौन्दर्य, सार्थक बिम्ब विधान और मानवीयकरण एवं रूपकों का समन्वय काव्य-सौष्ठव में श्रीवृद्धि करता हुआ दिखता है। प्रस्तुत है एक चाक्षुष बिम्ब और मानवीयकरण का सुन्दर चित्रण-

इठलाती सी चल रही, धवल चाँदनी रात,
लगे कान में कह गई, हवा चाँद की बात। (पृष्ठ 96)

संदेश पक्ष में आज के बाल-जीवन के दंश, बेटियों की महत्ता, वर्तमान न्याय व्यवस्था आदि पर वे कबीर के तेवर में करारी चोट करते हुए वे धन्ना-सेठ-कुबेरों की भी कोई परवाह नहीं करते। करें भी क्यों, उन्हें जो आनन्द की अनुभूति कबीर-रंग में रंगी फकीरी में हो रही है, उसकी तुलना में अमीरी कुछ भी नहीं है-

बचपन पर्वत ढो रहा भूल-भालकर रेल,
हवा नई, बातें नई, लेकिन वो ही खेल। (पृष्ठ 75)
x x x
घर घर में मधु चाँदनी, घर घर से तम दूर,
बेटी से ही हो रहा दसों दिशा में नूर।
दसो दिशा में नूर बेटियाँ जैसे मलयज,
ये ही सुर-मधु-राग तीज सावन की सजधज। (पृष्ठ 64)
x x x
निश्चित पहले से हुआ न्याय धर्म का न्याय,
फांसी का दिन पूछ लो उत्तम यही उपाय।
उत्तम यही उपाय कहाँ फरियाद करोगे,
कौन सुनेगा बात बताकर और मरोगे।
कह भूषण कवि आर्य, कबूतर बैठा चिंतित,
कहाँ फंसेगा बाज, हंस का मरना निश्चित।। (पृष्ठ 50)
x x x
'भूषण' फक्कड़ ही भला, सदा राम की टेर,
जिसको बनना वह बने, धन्ना सेठ-कुबेर। (पृष्ठ 69)

इतना ही नहीं कवि द्वारा कपटी भक्तों, कपटी साधुओं की भी जमकर खबर ली गई है। आज धर्म के नाम पर ऐसे सन्तों की बाढ़ सी आ गई है, जो चरित्रहीन होते हुए भी अपने अंधभक्तों के लिए भगवान बने हुए हैं-

तन-मन काला नाग-सा, निपट चरित से हीन,
उजले हंसों के हुए, आज रंग ये तीन।
आज रंग ये तीन, यही तो पार उतारें,
व्यर्थ सत्य की नाव, धर्म की वे पतवारें।
कह भूषण कवि आर्य, न भटकेगा तू वन-वन,
सीख वक्त के तौर, दूध-सा होगा तन-मन।। (पृष्ठ 40)

आवरण-सम्मति के रूप में वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. श्रीनिवासन् अय्यर के अनुसार इस काव्य कृति में प्रेम के चरम ऐक्य, राजनीति की स्वभावजन्य अविश्वसनयीता, सत्ता के द्वन्द्व, उसकी बिछी हुई बिसात, रिश्तों का खोखलापन, मानवोचित दुर्बलता, दम्भ-आडंबर, धर्म का ह्रास, किंकर्तव्यविमूढ़ता की स्थिति, दिग्भ्रम, टूटते बिखरते घर-परिवार, तत्जन्य दंश, बचपन के साथ अन्याय, समाज का वैषम्य परिवेश, भारतीय संस्कृति की हिलती जड़ें, जैसी समस्याओं, ब्रिदूपताओं और विसंगतियों पर कवि द्वारा कसे गए तंज रूबरू होते हैं।

अध्यात्म क्षेत्र में कबीर, रहीम और स्वामी दयानन्द सरस्वती आपके आदर्श हैं। कबीर का अध्यात्म, रहीम की नीति और स्वामी दयानन्द का जीवन दर्शन आपके दिशा-बोध है। संकलन की कुंडलियाँ एक से बढ़कर एक हैं। छन्द का कुशल निर्वाह हुआ है। बिम्बों, प्रतीकों, अलंकारों और शब्दशक्तियों का प्रयोग सहज और प्रभावशाली है।

कवि ने जो कविता के बारे में कुंडली प्रस्तुत की है, उसकी कुंडलियाँ उसी कसौटी पर खरी उतरती हैं। कविता के बारे में आपकी मान्यता है-

कविता कवि का दर्द मन, विरहिन की चिरपीर,
नैनन बहता नीर या, प्रेम पगी तस्वीर।
प्रेम पगी तस्वीर, कभी आहों की नदिया,
कभी गन्ध मकरन्द, कभी फूलों की बगिया।
कह भूषण कवि आर्य, कभी तो लगती सविता,
कभी ओस की बूँद, कभी शोलों-सी कविता।। (पृष्ठ 52)

उपर्युक्त विवेचन के आलोक में, मैं सारांशतः कहूँगा कि 'मिला काल से आँख' कृति का शीर्षक भी एकदम सार्थक है। इन कुंडलियों के माध्यम से कवि ने निश्चय ही काल से आँखें मिलाकर बातें की हैं, निडरता के साथ कवि ने आंखें मिलाकर नहीं बल्कि आँखों में आँखें डाल कर बातें

की हैं। इस काव्य-कृति के कथ्य का संदेश हमें अंधकार से प्रकाश की ओर, भय से निडरता की ओर, निराशा से आशा की ओर, अविश्वास से विश्वास की ओर, शून्य से अनन्त की ओर यात्रा करने को प्रोत्साहित करता है।

मैं इस कृति का समीक्षात्मक परिचय देते हुए कहना चाहूंगा कि-

बगिया दो सौ सुमन की, भाँति-भाँति की गन्ध,
कुंडलिया के रूप में, दिये अनूठे छन्द।
दिये अनूठे छन्द, सर्व परिवेश खंगाला,
यत्र-तत्र-सर्वत्र निरीक्षण सब कर डाला।
कहें समीक्षक इन्द्र, दगीली जिनकी अंगिया,
उनके सब ही दाग, दिखाती अनुपम बगिया ।।

कृति-परिचयः
कृति का नाम : 'मिला काल से आँख'
रचनाकार : भारत भूषण आर्य
पृष्ठ सं. : 120 , मूल्य: 450/-
संस्करण: 2025
प्रकाशक : साहित्य सहकार प्रकाशन, दिल्ली-110032

मैं इस श्रेष्ठ कृति के लिए भाई भारत भूषण को

अनेकशः बधाइयाँ एवं शुभकामनाएं देता हूं। वे इसी प्रकार निरन्तर लिखते रहें और समाज, देश एवं संस्कृति को दिशा देते रहें।

माटी अपना मनमीत

हरा भरा विस्तृत अरण्य
प्रचंड तेज लिए मार्तण्ड
पुष्पों से सज्जित उपवन
भाव विभोर तन और मन!

विहंग सुनाए सुमधुर गान
मनोरम दृश्य भरा विहान
प्रकृति माँ का रूप महान
करे सकल नित गुणगान!

तटिनी की अविरल धारा
बना प्रहरी महिधर प्यारा
तन मन है समर्पित सारा
ऐसा है भारत देश हमारा!

हृदय पटल नेह का दर्पण
होता जिसमें जीवन दर्शन
कण- कण में ईश का वास
अटूट रहे सदा यह विश्वास!

भोर बने आशा का प्रतीक
संध्या सुनाए जीवन- गीत
इस माटी को सब समर्पित
ये माटी ही अपना मनमीत!

अनिता सिंह (शिक्षिका)
देवघर, झारखंड।

अधूरी तलाश

तलाश रहती है अक्सर
आंखों को तेरी ,
हर रिश्ता ढकोसला सा लगता है,
तू मन ही मन में
मुझे, रोज मिला करता है
जिक्र, जब भी करें,
कोई तेरा ये तन, मन
इत्र सा महक करता है।

तलब रहती है ,होठों को तेरी
और दिल स्वच्छंद हो ,
तेरी ओर उड़ा करता है
नादान है, नहीं जानता
तू अक्सर ,किसी और पर
मरा करता है ।

फिर भी दिल ,
एतबार किया करता है
आएगा, एक दिन उस मोड पर
तू भी ,जिस मोड़ पर अक्सर
मेरा दिल रहा करता है।

सोनिया सैनी

समीक्षा

डॉ. ज़ियाउर रहमान जाफ़री

नालंदा,बिहार

उजालों के आस-पास :ग़ज़ल में नई ज़मीन की तलाश

अभिषेक कुमार सिंह ने थोड़े ही समय में हिंदी ग़ज़ल में अपनी ख़ास शनाख़्त बना ली है.उसकी अपनी वजह भी है.उन्होंने ग़ज़ल में नये प्रतीक और नये रदीफ़ तलाशे हैं.ग़ज़ल लिखते हुए न उन्होंने किसी दूसरे का ख्याल लिया है,और न ग़ज़ल के किसी पारंपरिक काफ़िया को अपनाया है.ऐसा भी नहीं है कि उनके पास विशाल तजुर्बा है,लेकिन अपने ख्यालों को नयेपन के साथ ग़ज़लों में समेटने की चमत्कारिक शैली है.यही कारण है कि हिंदी ग़ज़ल के युवा रचनाकारों में वह सरे फ़हरिस्त हैं.वीथियों के बीच के बाद उनका नया ग़ज़ल संग्रह उजालों के आसपास आया है. ज़ाहिर है शायर दुनिया के अंधेरों से निकल कर उजालों के पास जाना चाहता है,और इस कोशिश में वह उसके आसपास मंडराकर रह जाता है,क्योंकि बारिश, बादल,हवा, ज़मीन की तरह उजालों को भी देश के रईसों ने ख़रीद लिया है.उनकी ग़ज़लें हमें आश्वस्त करती हैं कि जहां कहीं भी बेईमानी,नाइंसाफी, वर्गभेद और तीरगी है, उस माहौल के ख़िलाफ़ साथ देने के लिए एक शायर खड़ा है.वह जब ग़ज़लें लिखते हैं, पूरी कायनात उनके साथ खड़ी हो जाती है.कहते हैं किट्स जब तपेदिक से मर रहे थे,तो उनकी दोस्त फ़ैनी पार्टी में अन्य पुरुषों के साथ दिल बहला रही थी.अभिषेक कुमार सिंह की ग़ज़लों की यह ख़ूबसूरती है कि उनकी उदासी पूरे जहां की उदासी बन जाती है.भाषा के दृष्टिकोण से भी उन्होंने जो मुहावरे गढे हैं,वह हिंदी ग़ज़ल में सिर्फ उन्हीं की थाती है.असल में वह ग़ज़ल लिखते हुए पूरी एहतियात बरतते हैं,और इस कोशिश में उनके एक-एक शेर किसी नगीने की तरह निखर जाते हैं.अतुल अजनबी का एक शेर है कि -

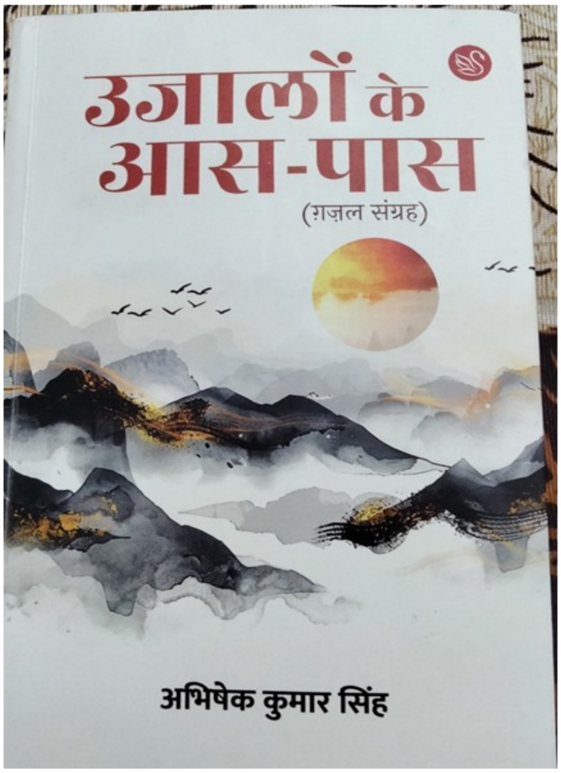

वो एहतियात बरतने का इतना आदी था
ज़रा सा काम उसे बार-बार करना पड़ा

उनके कई शेर ऐसे हैं.जो पौराणिक प्रतीकों को आधुनिक संदर्भ में उठाते हैं.एक ग़ज़ल के कुछ शेर देखें -

जलवायु में परिवर्तन की बात करेंगे
शातिर बादल अपने मन की बात करेंगे

जब जब सीता को अपमानित करना होगा
दुनिया वाले इक धोबिन की बात करेंगे
शबरी के बेरों को जूठा करने वाले
कैसे राम के निश्छल मन की बात करेंगे

ये ऐसे शेर हैं जो हमारी दोहरी नीति को बेपर्दा करते हैं. असल में आज का इंसान कई परतों में जी रहा है, इसलिए उसकी पहचान की कोशिश में आदमी बार -बार फरेब खा रहा है. ऐसे ही कुछ और शेर देखें -

बसाना था जहां कुछ बेघरों को
वहां भेजा गया बुलडोज़रों को
.....
नफ़रतों का यह बवंडर कौन रोकेगा यहां
अनगिनत नाथू खड़े हैं गांधियों के वेश में
....
ऐसा न हो के सारा अडानी ख़रीद ले
तू अपनी प्यास के लिए पानी ख़रीद ले

क्या कहें किस हाल में मारा गया
न्याय अमृत काल में मारा गया

यह ऐसे शेर है जिसे वही शायर लिख पाता है,जो किसी खौफ़ से भयभीत नहीं होता,और न जिसे बादशाहों के तलवे चाटने की ज़रूरत पड़ती है.पूरी हिंदी

ग़ज़ल में दुष्यंत और अदम को छोड़ दें तो जहां बच-बचाकर लिखने का रिवाज है. अभिषेक कुमार सिंह हुकूमत की नाइंसाफ़ी के ख़िलाफ़ खुलकर खड़े होते हैं,और कई बार तो वह बग़ावत पर आ जाते हैं. कुछ और शेर देखें -

नाचती है शाह का आदेश सुनकर
न्याय की देवी रखैली हो चुकी है

.....

डार्क फ़िल्मों के चरित्रों की तरह हो जाएंगे
लड़ते लड़ते लोग गुंडों की तरह हो जाएंगे

.....

हम मजूरों को ठिठुरना है सदा
हां कभी बीड़ी जला ली जाएगी

यह वह शेर है जिसमें पूस की रात का सारा कथानक निचोड़ कर रख दिया गया है.

उनकी शायरी में जहां कहीं थोड़ा बहुत प्रेम है, वहां भी उनकी मासूमियत झलकती है. न कोई चाहत न कोई फ़रेब न कोई नुमाइश बस शायर इतना ही कह पाता है कि -

दिल वालों की सोहबत ज़िंदा रखती है
मुझको मेरी आदत ज़िंदा रखती है

मैंने जीना छोड़ दिया तो यह जाना
मुझको तेरी चाहत ज़िंदा रखती है

पर शायर बहुत देर तक इस मोहब्बत की भी जाल में नहीं फसता, और अगले ही पल एक ऐसा शेर कह देता है, जिसमें कई हिंसक देशों की परतें खुल जाती हैं और उसका अंधकार भविष्य हमारे सामने आ जाता है-

हिंसक होकर इक दिन वे मर जाते हैं
जिन धर्मों को दहशत ज़िंदा रखती है

ऐसे ही ख़ूबसूरत अनूठे, और चौंकाने वाले शेर इस संग्रह में भरे पड़े हैं, जिसे पढ़ते हुए हम हैरतज़दा हो जाते हैं, और इस शायर के मुरीद हुए बिना नहीं रहते.

उजालों के आस-पास
ग़ज़ल संग्रह
अभिषेक कुमार सिंह
वर्ष 2025, मूल्य 195, पृष्ठ 120
श्वेतवर्णा प्रकाशन नोयडा

विद्या भट्ट

रायपुर

चुरा लाई हूं

तुम्हारे शहर से
धूप का एक टुकड़ा
जिसे अब क़ैद कर रखा है
घर रोशन करने के लिए,
अपने कमरे में..!

चुरा लाई हूं
तुम्हारे कुछ एहसास
तुम्हारे दिल की गुल्लक से
जो धड़कते हैं अब
सांसें बन कर,
मेरे दिल में..!!

कुछ एहसास जो
जगमग करते है,दिल रौशन
अंधेरा मन का दूर भगाते हैं
ग़म के गहरे कुंवें से..
मुझे खींच बाहर लाते हैं...!!

एहसास तुम्हारे पल पल मेरे,
दिल को सुकून बहुत पहुंचाते हैं..!!

लाकर के चांद तुम्हारे शहर से
अपने घर में टांक रखा है..
जब भी शीतलता चाहूं तब तब
उसे निहार जाते हैं ..!

पूस जाड़ थरथर तन काँपा। सुरुज जड़ाइ लंक दिसि तापा॥
बिरह बाढ़ि भा दारुन सीऊ। कँपि कँपि मरौं लेहि हरि जीऊ॥

कंत कहाँ हौं लागौं हियरै। पंथ अपार सूझ नहिं नियरें॥
सौर सुपेती आवै जूड़ी। जानहुँ सेज हिवंचल बूढ़ी॥

मानवी सेवा संस्था : राष्ट्र और राष्ट्र जन की सेवा में समर्पित

274/x ,शक्तिनगर कालोनी ,आरोग्य मंदिर ,गोरखपुर -273003

http://www.manvipatrika.co.in

(पत्रिका यहाँ से भी पढ़ सकते है)